Vol. II, Issue XIV – June 2016
Article ID # 1000
Peer–Review Refereed Research Journal
ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

पत्रकारिता शिक्षा – कुछ नए पहलू

डा. योगेश कुमार गुप्ता
विभागाध्यक्ष, पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग
निम्स विश्वविद्यालय, जयपुर

डॉ० शिखा शुक्ला (पूर्व शोध छात्रा)
म०म०मो० मालवीय हिन्दी पत्रकारिता संस्थान,
महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी

यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि अधिकांश स्थितियों में परिवर्तन और परिवर्तन की सोच तथा वैचारिक परिवेश को मीडिया ने प्रभावित किया है। वर्तमान में समाज का जो स्वरूप उभरकर सामने आ रहा है उसमें स्पष्टतः मीडिया का प्रभाव प्रतिबिंबित हो रहा है। सूचना और विचारों के संवाहक और संप्रेषण की भूमिका के दायरे को विस्तारित कर आज मीडिया सूचना और विचारों के उत्प्रेरक की भूमिका निभा रहा है। परिवर्तन और प्रभाव का यही दौर यदि इसी गति से कायम रहा तो वह समय दूर नहीं जब उत्प्रेरक की भूमिका परिवर्तित होकर जनक की हो जाएगी।

जिस प्रकार पिछले कुछ वर्षों में पत्रकारिता की भूमिका में क्रांतिकारी परिवर्तन हुए हैं, उसी तरह पत्रकारिता शिक्षा के क्षेत्र में भी व्यापक परिवर्तन हुए हैं। यह परिवर्तन पाठ्यक्रमों के प्रकारों से लेकर प्रशिक्षण संस्थानों के प्रकार तक विस्तृत और विस्तारित हैं। मीडिया शिक्षण की आवश्यकता को हमें आज इसी परिप्रेक्ष्य में देखना होगा। मीडिया शिक्षा वर्तमान में दो तरह के वैचारिक द्वंदों के बीच झूल रही है, एक है नैसर्गिक प्रतिभा बनाम विधिवत शिक्षा, दूसरा है मिशन बनाम प्रोफेशनल। इन दोनों ही द्वंदों के बीच में रास्ता खोजकर मीडिया शिक्षा की सम्भावनाओं, आवश्यकताओं, विशेषताओं और संदर्भों को देखना होगा।

भारत और दुनिया भर में जैसे–जैसे जनसंचार माध्यमों की मांग बड़ी तेजी से बढ़ रही है और मीडिया संगठनों का विस्तार हो रहा है तथा वे निरन्तर प्रगति कर रहे हैं, तब ऐसे संगठनों में काम करने के इच्छुक लोगों को सिखाने और उन्हें तैयार करने के लिए कई शिक्षण संस्थान खुल गए हैं। भारत में ऐसे सभी संस्थानों को ''शिक्षण संस्थान'' कहना उचित नहीं होगा। मीडिया के लिए पेशेवर लोग तैयार करने का दावा करने वाले इन संस्थानों में से कुछ तो 'शिक्षा की दुकानें' ही है। तेजी से हो रहे प्रौद्योगिकी बदलावों ने प्रिंट, रेडियो, टेलीविजन, सिनेमा जैसे विभिन्न माध्यमों के काम करने के तरीकों

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

को भी बदल डाला है। मीडिया संगठनों के लिए या उनमें काम करने वाले अधिकांश लोगों को अपने कौशल को बढ़ाने के लिए कैरियर के दौरान कोर्स करने या काम के दौरान प्रशिक्षण कार्यक्रमों की जरूरत महसूस होने लगी है। इन दिनों भारत में पत्रकारों के साथ–साथ दूसरे मीडिया पेशेवर तैयार करने वाले शिक्षण और प्रशिक्षण संस्थान कुकुरमुत्तों की तरह उग आए हैं। मीडिया के विकास और इसमें बढ़ते जा रहे आर्थिक निवेश पर यदि हम गौर करें तो हमें महसूस होगा कि आने वाले समय में मीडिया उद्योग अग्रणी उद्योगों की श्रेणी में खड़ा होगा। ऐसा उद्योग जो देश की दिशा तय करे और दशा सुधारे। ऐसे उद्योगों के लिए सही ज्ञान एवं दृष्टिकोण रखने वाले व्यक्तियों को विकसित करने का कार्य मीडिया प्रशिक्षण संस्थानों को ही करना है। यह कार्य चुनौतीपूर्ण है लेकिन अत्यंत आवश्यक भी है।

जितनी चुनौतियाँ मीडिया के सामने है, उतनी ही चुनौतियाँ मीडिया शिक्षा के सामने भी है। यह भी उतना ही सच है कि मीडिया शिक्षा के क्षेत्र में व्यापक और दूरगामी सम्भावनाएँ हैं। मीडिया शिक्षा पर गम्भीर चिन्तन जरूरी है, जिससे एक ठोस और कारगर कार्ययोजना बनाई जा सके। एक ऐसी योजना जो पूरे देश में मीडिया शिक्षा का एक मौलिक मॉडल खड़ा करें, जिसके माध्यम से मीडिया के क्षेत्र में काम करने के लिए सक्षम, दक्ष और मूल्यनिष्ठ पेशेवरों की एक नई पौध तैयार हो सकें।

प्रस्तावना–

भारत में जनमाध्यमों का न केवल तेजी से विस्तार हो रहा है, बल्कि निकट भविष्य में इनका तेजी से विकसित होना तय है। मीडिया विस्तार के साथ ही निरन्तर असरदार और सर्वव्यापी होता जा रहा है। जीवन के हर पहलू में इसका दखल है। यदि भारत में एक स्वतंत्र मीडिया न होता तो हम अपने आपको दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र कहलाने में कामयाब न हुए होते।[1] पत्रकारिता के लिए लोकतंत्र के चौथे स्तम्भ के रूप में अपनी उपस्थिति को संतुष्ट और संस्थापित करने का इससे बेहतर अवसर और कोई नहीं हो सकता है। पत्रकारिता ने इस अवसर का भरपूर लाभ भी उठाया है।

यह वह ऐतिहासिक क्षण है, जब मीडिया की खोजी रपटों और विश्लेषणों को लोकतंत्र के अन्य तीनों स्तम्भों ने संज्ञान में लिया और उन पर पूरी गम्भीरता से यथोचित कार्यवाही भी की। परिणामस्वरूप समाज की अपेक्षाएं मीडिया से निरन्तर बढ़ी है। समाज में मीडिया को नैतिक मूल्यों की रखवाली के लिए एकमात्र आशा की किरण के रूप में देखा जा रहा है।[2] हालांकि देश में कॉरपोरेट मीडिया का एक बड़ा वर्ग बड़े ही अपरिपक्व तथा अज्ञानी तरीके से कारोबारी रूप ले चुका है, जो विज्ञापनों से अपनी कमाई को बढ़ाने में ही लगा हुआ है और जो छोटे तथा सम्पन्न तबके की जरूरतों को ही ध्यान में रख रहा है फिर भी मीडिया की एक बड़ी तस्वीर उतनी धूँधली भी नहीं है।

भारत में मुख्य धारा के अधिकांश मीडिया द्वारा अपने पाठकों, श्रोताओं और दर्शकों को बुद्धू ही बनाया जा रहा है, बावजूद इसके अभी भी एक वर्ग यह मानता है कि भले ही पत्रकारिता को एक मिशन न माना जाता रहा हो फिर भी अखबारों, पत्रिकाओं, पुस्तकों, रेडियो, टेलीविजन, डॉक्यूमेंट्री और फीचर फिल्मों में न केवल मनोरंजन करने और सूचना देने की ताकत है, बल्कि इनमें शिक्षा को और सशक्त

बनाने की भी शक्ति है।[3] वर्षों से पत्रकारिता को एक मिशन मानकर उसे सामाजिक आवश्यकताओं और परिस्थितियों के आधार पर संचालित करने का प्रयास हो रहा है। आज व्यावसायिक स्पर्धा के दौर में नई–नई वृत्तियाँ विकसित हो रही है। ऐसे में मीडिया को सिर्फ मिशन तक सीमित कर देना मीडिया वृत्ति के साथ अन्याय होगा। मीडिया में मिशन के साथ प्रोफेशनलिज्म जोड़ना वर्तमान की आवश्यकता है। पत्रकारिता एक नोबेल प्रोफेशनल है, जो मूल्यों और सिद्धान्तों पर आधारित है।

एक 'मिशनरी प्रोफेशन' होने के कारण इसका विधिवत और शास्त्रीय शिक्षण भी जरूरी है। ऐसा शिक्षण जो न सिर्फ इस वृत्ति के गुण एवं बारीकियाँ सिखाएं अपितु इस वृत्ति से जुड़े मूल्यों और आदर्शों की भी बातें करे। देश के साथ प्रतिबद्धता और समाज से तादत्म्य की भी बात करें।[4] कहने की जरूरत नहीं है कि अगर मीडिया संस्थान ईमानदार पत्रकारीय मूल्यों, आचार संहिताओं और लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रति प्रतिबद्ध हो तो वहाँ इस बात की सम्भावना बहुत कम होगी कि कोई भ्रष्ट, अनैतिक और मूर्ख पत्रकार घुस पाए या लम्बे समय तक टिक पाए।

ऐसे भ्रष्ट और अनैतिक पत्रकारों के लिए वहाँ मनमानी करने की भी गुंजाइश कम होगी, क्योंकि संस्थानिक तौर पर वहाँ जाँच–पड़ताल की व्यवस्था एक अंकुश की तरह काम करेगी। किन्तु यदि संस्थान खुद भ्रष्ट है तो वहाँ वैसे ही पत्रकारों को आगे बढ़ाया जाएगा या बढ़ाया जाता है। आशय है कि आज न्यूज मीडिया की विकृतियों, विचलनों और भ्रष्टाचार का दायरा व्यक्तिगत पत्रकारों से बहुत आगे बढ़कर संस्थानिक स्वरूप ले चुका है और उसका इलाज भी व्यक्तिगत नहीं बल्कि संस्थानिक ही होना चाहिए। निश्चय ही पत्रकारिता में प्रतिभाशाली, पढ़े–लिखे, विभिन्न विषयों के विशेषज्ञ संवेदनशील और गम्भीर लोगों की जरूरत है। लेकिन यहाँ भी समस्या संस्थानिक ही है, क्योंकि न्यूज मीडिया में मनोरंजन के बढ़ते बोल–बाले और उसके दबाव में पत्रकारिता को हल्का–फुल्का बनाने का संस्थानिक दबाव इस कदर बढ़ता जा रहा है कि कार्पोरेट मीडिया को बहुत प्रतिभाशाली, पढ़े–लिखे और विशेषज्ञ पत्रकारों की जरूरत ही नहीं है।[5]

भारतीय मीडिया परिदृश्य 'मीडियास्केप'–

'मीडियास्केप' शब्द का पहले पहल प्रयोग भारतीय मूल के शिक्षाविद्, अर्जुन अप्पादुरै ने 1990 में किया था। इस शब्द का आशय यह था कि दृश्यों का विश्व पर किस प्रकार से प्रभाव पड़ता है और इसका प्रयोग 'विश्व सांस्कृतिक प्रवाहों' में इलेक्ट्रॉनिक और प्रिंट मीडिया की भूमिका को समझाने और सुनिश्चित करने के लिए किया गया था।[6] भारत में मीडिया की भूमिका के बारे में सबसे स्पष्ट बात यही है कि कभी समाचार और विचार देने का प्रभावी माध्यम आज खुद खबरों में है।

आज मीडिया के विभिन्न स्वरूपों– प्रिंट न्यूज, इलेक्ट्रॉनिक न्यूज और वेबन्यूज पोर्टल में से प्रत्येक के उद्देश्य की तुलना भारत में पहले समाचार पत्र 'बंगाल–गजट' या 'कलकत्ता जनरल एडवरटाइजर' 29 जनवरी 1780 को कोलकाता से प्रकाशित करने वाले आईरिश अंग्रेज जेम्स ऑगस्टस हिक्की के उद्देश्य से करे तो ज्ञात होता है कि मीडिया का सार्वजनिक लक्ष्य एक ही है– पाठकों, दर्शकों, श्रोताओं के पास नई सूचना, जानकारी, समाचार या विचार सबसे पहले पहुँचाना। पाठकों, दर्शकों तक निष्पक्षता से

सूचनाएँ, जानकारी पहुँचाना, उसका मनोरंजन करना और उन्हें किसी भी विचार, घटना, समस्या, कथन, निर्णय, कार्यवाही और प्रतिक्रिया के प्रत्येक पक्ष से परिचित कराने के लिए ही प्रेस अस्तित्व में आया। प्रेस ने राष्ट्रों के शाश्वत जीवन–मूल्यों, उनके मूल भौगोलिक और सांस्कृतिक स्वरूप के संरक्षण तथा उनकी वृद्धि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

मीडिया वास्तव में कई राष्ट्रों के ही नहीं, बल्कि हर तरह के न्यायोचित संघर्षों का सशक्त माध्यम रहा है। आजादी के पश्चात् देश के पुनर्निर्माण और लोकतांत्रिक समाज की सामूहिक चेतना को जगाए रखना प्रेस का मिशन बना रहा। प्रौद्योगिकी के विकास ने मिशन को प्रोफेशन में परिवर्तित कर दिया। पिछले 10–15 वर्षों में प्रिंट मीडिया को इलेक्ट्रॉनिक मीडिया से और इंटरनेट से कड़ी चुनौती का सामना करना पड़ रहा है। लेकिन 45 वर्ष पहले आई इंटरनेट प्रौद्योगिकी और लगभग 25 बरस पहले बने वर्ल्ड वाइड वेब से पाठकों, दर्शकों और श्रोताओं के सामने एक ऐसा विकल्प आ गया, जिस पर किसी का एकाधिकार नहीं था और यह इतना मारक साबित हुआ कि अमेरिका, यूरोप के लगभग सभी देशों तथा ऑस्ट्रेलिया और जापान में पत्र–पत्रिकाएँ 6 से 15 प्रतिशत तक नकारात्मक वृद्धि दर्ज कराने लगी है। अमेरिका में वेब 2010 में प्रिंट को पछाड़ चुका है। अनुमान है कि पिछले दो ढाई दशक में विकसित देशों के 8,000 से अधिक पत्रों ने या तो दम तोड़ दिया या गुमनामी में खो गए।[7]

इसके विपरीत भारत में मीडिया का माहौल एकदम अलग है और यह ऐसा बना ही रहेगा। प्रिंट, रेडियो, टी.वी., सिनेमा और इंटरनेट सभी बढ़ रहे हैं और उम्मीद है कि हर साल इसमें वृद्धि होगी।[8] अनुमान है कि भारत में इस वर्ष के अन्त तक इंटरनेट का उपयोग करने वालों की संख्या के मामले में अमेरिका को पीछे छोड़ देगा। दिसम्बर 2015 तक देश में इंटरनेट उपभोक्ताओं की संख्या 40.2 करोड़ होने का अंदाजा था। एक सर्वे के मुताबिक 2016 के अंत तक भारत में वाईफाई इन्टरनेट उपयोगकर्ताओं की संख्या 546 मिलियन तक पहुंच जाएगी। ग्रामीण क्षेत्रों में यह वृद्धि 39 प्रतिशत तो शहरी भारत में 29 प्रतिशत थी और दूरसंचार नियामक आयोग (ट्राई) के आँकड़े देश में 89 करोड़ सक्रिय मोबाइल कनेक्शनों की गवाही देते हैं जबकि कुल आबादी के 13 प्रतिशत लोग स्मार्टफोन का उपयोग कर रहे हैं। मोबाइल पर बढ़ते इंटरनेट उपयोग का अंदाज इसी से लगाया जा सकता है कि अक्टूबर 2014 में 15.9 करोड़ लोग इसका उपयोग कर रहे थे वही 2017 तक यह संख्या 40.2 करोड़ होने का अंदाजा लगाया जा रहा है। **रिपोर्ट–आईएएमएआई–केपीएमजी**

'द इकोनॉमिस्ट' का कहना है कि भारत में दैनिक समाचार–पत्रों की 11 करोड़ प्रतियाँ प्रतिदिन खरीदी जाती है और भारत के समाचार–पत्रों के महापंजीयक की 2013–14 के लिए ताजा रिपोर्ट तो हिन्दी प्रकाशकों की 22.64 करोड़ प्रतियाँ बिकने की बात कहती है। भारत में साक्षरता अभी 74 प्रतिशत है, किन्तु साक्षरता सौ फीसदी हो जाने और डिजिटल कनेक्टिविटी सब तरफ पहुँच जाने के बाद पाठक क्या करेंगे कहना कठिन है, हालांकि भारत में पिछले कुछ वर्षों में मीडिया का उपभोग 3 से 5 प्रतिशत तक बढ़ा है, लेकिन यह मुख्य रूप से डिजिटल मीडिया है।[9]

पश्चिमी देशों से अलग भारत में रेडियो बड़ी तेजी से विस्तारित होने वाला माध्यम है। 1990 के दशक के अन्तिम साल में भारत में रेडियो उद्योग का निजीकरण किया गया, लेकिन इसके विकास का असली युग तब आया जब निजी रेडियो के लाइसेंस देने का दूसरा चरण शुरू हुआ। प्रारम्भ में रेडियो कार्यक्रम रेडियो सेटों तक सीमित थे। अब मोबाइल फोन के माध्यम से एफएम रेडियो सुना जाने लगा है। 2012 के आंकडों के अनुसार देश में 245 एफएम रेडियो स्टेशन खुल चुके थे। उम्मीद की जा रही है कि निजीकरण के अगले दौर में 294 शहरों में 839 नये एफएम रेडियो स्टेशन काम करने लगेंगे।[10] वर्तमान में पूरे भारत में आकाशवाणी के 419 स्टेशन काम कर रहे हैं।

टेलीविजन का भारत का अनुभव एकदम अलग ही है। जहाँ समाचार और समसामयिक मामलों पर केन्द्रित कुल 397 चैनल है और देश के 12.6 करोड़ घरों में केबल और सैटेलाइट कनेक्शन है। टेलीविजन का भारतीय बाजार तेजी से बढ़ रहा है। अनेक उच्च गुणवत्तायुक्त चैनल लोगों में अपनी पैठ बनाते जा रहे हैं। अब सरकार अपना पूरा ध्यान डिजिटलाइजेशन पर दे रही है। डिजिटलाइजेशन के पश्चात् पूरे तंत्र में पारदर्शिता आएगी और राजस्व में अनेक गुणा वृद्धि होगी।[11] दरअसल डिजिटल क्रान्ति ने समाचार जगत् का लोकतंत्रीकरण कर दिया है।

हालाँकि यह लोकतंत्र राजनैतिक लोकतंत्र की तरह ही अराजकता तथा विचलन से बरी नहीं है। यह मीडिया की पुर्नपरिभाषा का युग है और समाज के संग उसके संबंधों का पुनराविष्कार भी, भारत की बजाय अधिक से अधिक 'इंडिया' से संवाद करने वाले मीडिया की यह दशा चौंकाती नहीं।[12] भारतीय 'मीडियास्कोप' के इस परिदृश्य से यह स्पष्ट हो जाता है कि आने वाले सालों में पेशेवर मीडियाकर्मियों की मांग निश्चित रूप से बड़ी तेजी से बढ़ेगी। इन स्थितियों में मीडिया में काम करने वाले पेशेवरों को पढ़ाने और प्रशिक्षित करने वाले शिक्षण संस्थानों की संख्या में भी तेजी से वृद्धि होगी।

मीडिया शिक्षा का वैश्विक इतिहास –

वर्तमान में मीडिया शिक्षा व्यवसाय के रूप में अपने चरम पर है। समाचार, सूचना और मनोरंजन के क्षेत्र में इस विराट परिवर्तन का प्रभाव पत्रकारिता के प्रशिक्षण पर भी पड़ना ही था। पत्रकारिता जब बाजारोन्मुख हो गई तो उसकी शिक्षा केवल सैद्धान्तिक कैसे रह सकती थी। पत्रकारिता तेजी से एक उद्योग बन गई थी तो उसमें काम करने वालों को बाजार की समझ पैदा करनी ही थी। यह वह दौर है जहाँ शुद्ध सूचना या खालिस तथ्य का उतना महत्त्व नहीं रहा जितना सूचना की पैकेजिंग का उसे बिक्री लायक बनाने का। इसलिए पत्रकारिता की व्यावहारिक आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षा नहीं दी जाती तो वह बाजार में नहीं टिक पाएगी।[13] मीडिया शिक्षा के इतिहास को काल क्रमानुसार इस प्रकार बाँधा जा सकता है।

1. आरम्भिक काल (1700–1860)

पहले–पहल 1860 तक मीडिया शिक्षा को प्रशिक्षुता या गुरु–शिष्य परम्परा के रूप में ही मान्यता दी गई। यह प्रशिक्षण उस समय प्रचलित मुद्रित माध्यमों तक ही सीमित था।

2. दूसरा काल (1861–1910)

अमेरिकी विश्वविद्यालयों में मीडिया शिक्षा की औपचारिक शुरुआत पत्रकारिता प्रशिक्षण के रूप में हुई। मीडिया शिक्षा को विश्व में पहली बार नियमित पाठ्यक्रम के रूप में औपचारिक शिक्षा में शामिल किया गया। तब तक यह शिक्षा भाषा विभागों, भाषा से जुड़े मुद्रित माध्यमों में प्रशिक्षण, प्रशिक्षुता कार्यक्रमों तक सीमित होकर रह गई। इसे न तो पूर्ण पाठ्यक्रम के रूप में अकादमिक मान्यता मिली और न ही व्यावसायिक प्रशिक्षण के रूप में।

3. तीसरा काल (1910–1960)

मीडिया शिक्षा की पहली औपचारिक शुरुआत के रूप में 1910 में विस्कोंसिन विश्वविद्यालय के विलार्ड डैडी ब्लेयर और मिसुरी–विश्वविद्यालय के वाल्टर विलियम ने पत्रकारिता के विशिष्ट शिक्षण पाठ्यक्रम की शुरुआत की। यह प्रशिक्षण अत्यन्त प्राथमिक और अनौपचारिक प्रकृति का था। इसे औपचारिक बनाने के प्रयत्न किए गए, लेकिन यह प्रयास अधिक सफल नहीं हो पाया।

सन् 1912 में कोलम्बिया विश्वविद्यालय में जोसेफ पुलित्जर ने पत्रकारिता के अलग विभाग की स्थापना का विचार रखा, इसका विरोध हुआ और विरोध करने वालों में पत्रकार भी शामिल थे। इससे पूर्व भी पुलित्जर अपना यह विचार 'नोर्थ अमेरिकन रिव्यू' के मई 1904 के अंक में 'पत्रकारिता विद्यालय की स्थापना' लेख में रख चुके थे। उनका यह विचार था कि पत्रकारिता से जुड़े व्यक्तियों को इस प्रकार की शिक्षा दी जानी चाहिए। समाज में पत्रकार भी शिक्षक, आलोचक– समालोचक के रूप में अपनी अहम भूमिका निभाता है। यह शिक्षा उसे व्यवसायगत, बौद्धिक और मूल्यगत जानकारी प्रदान कर सकती है। उनका यह भी विचार था कि एक मीडिया शिक्षार्थी को साहित्य, आचार संहिता, अर्थव्यवस्था, इतिहास, समाजशास्त्र और अन्य विषयों का ज्ञान भी होना चाहिए। इसके साथ उसे तुलनात्मक अध्ययनों, न्यूज केसेज, केस अध्ययन, आलोचनात्मक शोध भी होना चाहिए। उन्हीं के प्रयासों के फलस्वरूप कालान्तर में एक पत्रकारिता विश्वविद्यालय की स्थापना की गई।

तीसरे दौर के दुविधाभासों के साथ ब्लेयर और विलियम ने मिसूरी में पहला मीडिया शिक्षा विभाग स्थापित किया। एक तरफ जहाँ ब्लेयर ने अपना संस्थान लिबरल महाविद्यालय में स्थापित किया वहीं दूसरी ओर बिल्वर श्रेम ने सम्प्रेषण शोध विषयों के साथ इसकी शुरुआत की और अपने शोधपत्र विश्व के सामने रखे।

4. चौथा काल (1950 – वर्तमान तक)

चौथे दौर में 1950 के बाद से मीडिया शिक्षा एवं शोध की औपचारिक शुरुआत हुई। इसके बाद तो मीडिया के विभिन्न क्षेत्र सामने आए और शोध को भी मीडिया शिक्षा में मान्यता मिल गई। यद्यपि 1970–80 के दशक में पत्रकारिता और मीडिया विद्यालय का संक्रेन्द्रण सामग्री संचय पर अधिक रहा। जबकि 1980–90 और इसके बाद के दशकों में शोध ने नवीन सूचना आयामों को जन्म दिया। इसी विचार ने नए सूचना युग की शुरुआत की जिसने, नवीन सम्प्रेषण सिद्धान्तों और नई संकल्पनाओं को जन्म दिया। वर्तमान में मीडिया शोध एक नये पहलू के रूप में उभरा है।

भारत में मीडिया शिक्षा–

भारतीय मीडिया शिक्षा के पहले विद्यालय की स्थापना 1920 में मद्रास में श्रीमती एनी बेसेन्ट के प्रयासों से हुई। इसका उद्देश्य राष्ट्रीयता एवं स्वतंत्रता की अलख जगाना था। 1930 में अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय ने मीडिया शिक्षा की शुरुआत प्रमाण–पत्र पाठ्यक्रम के रूप में रहमत अली के नेतृत्व में की। सन् 1940 में यह पाठ्यक्रम बन्द कर दिया गया।

सन् 1941 में पी०पी० सिंह नई आशा की किरण लेकर आए और संयुक्त भारत के पंजाब विश्वविद्यालय, लाहौर में पत्रकारिता विभाग स्थापित किया गया। देश के विभाजन के बाद पी०पी० सिंह के साथ यह विद्यालय भी दिल्ली में आ गया। सन् 1962 के बाद पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़ में स्थापित किया गया । इसी बीच 1952 में नागपुर विश्वविद्यालय ने पारम्परिक तौर पर मीडिया शिक्षा कार्यक्रम की शुरुआत की। सन् 1965 में भारतीय जनसंचार संस्थान में मीडिया शिक्षा एवं जनसंचार प्रशिक्षण की शुरुआत की गई।

भारत में मीडिया शिक्षा का वर्तमान स्वरूप–

भारत में आज मीडिया शिक्षा अपनी तरूणावस्था में है। मीडिया शिक्षा की जरूरतें और लक्ष्य वह नहीं है जो आज से केवल 12–13 वर्ष पूर्व थे। उस समय केवल मुद्रण को ही पत्रकारिता मान लिया जाता था। आज भारतीय मीडिया का स्वरूप बदल चुका है। मीडिया शिक्षा में वेब पत्रकारिता, ब्लागिंग पत्रकारिता, इंटरनेट, मोबाइल, रेडियो, टेलीविजन, विडियो, ई–पेपर सब कुछ शामिल है। यदि प्रिंट पहला चरण है, तो रेडियो–टेलीविजन दूसरा और न्यू मीडिया तीसरी पंक्ति है, जिसने कन्वर्जेन्स की संकल्पना को जन्म दिया है। इस समय 100 से अधिक विश्वविद्यालयों में पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग स्थापित कर उनमें विभिन्न पाठ्यक्रमों का अध्ययन कराया जा रहा है। कहीं प्रशिक्षण का जोर है तो कहीं सैद्धान्तिक शिक्षण का। शोध के नाम पर खानापूर्ति जगजाहिर है। हार्टले ने मीडिया शिक्षा के तीन पहलुओं को मान्यता दी है– 1. सैद्धान्तिक शिक्षा 2. प्रशिक्षण 3. शोध।

शोध को भी मीडिया शिक्षा का ही एक अवयव माना गया है। मीडिया शोध में नए सिद्धान्तों की शोध करना, नए सिद्धान्त विकसित करना एवं पुराने सिद्धान्तों की जाँच करने या नवीन अनुसंधान प्रणाली, नए माध्यमों में अन्तर्सम्बन्ध ढूँढ़ने से भी सम्बन्धित है। मीडिया शिक्षण संस्थानों के तेजी से प्रसार के बावजूद एक अच्छी खासी तादाद में प्रशिक्षणार्थियों, प्रोबेशनरों और मीडिया संगठनों के नए रंगरूटों को पत्रकारिता या जनसंचार माध्यमों की कोई औपचारिक शिक्षा प्राप्त नहीं है। पत्रकारिता विषयक प्रशिक्षण की बहुत सी समस्याएँ भी हैं। सुविधाओं तथा प्रोत्साहन का अभाव इसमें प्रमुख है।[14]

मीडिया शिक्षा का वर्तमान मॉडल–

समय के अनुसार परिवर्तन आवश्यक है। मीडिया शिक्षा के वर्तमान मॉडल में भी परिवर्तन की आवश्यकता है। आज पत्रकारिता के सामने उभर रही चुनौतियों को देखते हुए मीडिया शिक्षण संस्थानों द्वारा तैयार किए जाने वाले छात्रों को और अधिक सार्वत्रिक एवं व्यावहारिक ज्ञान की आवश्यकता है। सिर्फ कक्षा में दी जाने वाली शिक्षा आज मीडिया में जाने वाले युवा के लिए पर्याप्त नहीं है। व्यावहारिक

ज्ञान के नवीनतम मॉडल खोजकर उनके अनुसार मीडिया शिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिए। जिस तरह की चुनौतियों का सामना काम के दौरान करना पडता है, उनसे यदि शिक्षार्थी पहले से अवगत हो जाएं तो वह बेहतर ढंग से तैयार होकर व्यावहारिक क्षेत्र में पदार्पण करेंगे। आपसी प्रतिस्पर्धा और संस्थागत दबाव के आगे संस्थानों में कार्यरत वरिष्ठ मीडिया कर्मी प्रोबेशनर को सिखाने में रुचि नहीं लेते। इसलिए अब सीखे हुए प्रोफेशनल की ही आवश्यकता है।

मीडिया पाठ्यक्रमों में एकरूपता–

मीडिया शिक्षा की बढ़ती लोकप्रियता एवं व्यवसाय में बढ़ते मानव संसाधन की आवश्यकता को देखते हुए सरकारी संस्थानों के साथ–साथ कई निजी संस्थानों ने भी मीडिया से संबंधित डिग्री एवं डिप्लोमा पाठ्यक्रम प्रारम्भ कर दिए हैं। अब तो प्रतिष्ठत मीडिया संस्थानों ने भी अपने प्रशिक्षण संस्थान प्रारम्भ कर दिए हैं, जिनके माध्यम से वे अपनी आवश्यकतानुसार मानव संसाधन प्रशिक्षित कर रहे हैं। इन संस्थानों में डिप्लोमा या सर्टिफिकेट के साथ ही अपने संस्थान में रोजगार की गारंटी भी दी जाती है। ऐसे संस्थानों से विद्यार्थी प्रशिक्षण तो पा जाते हैं, परन्तु पत्रकारिता के क्षेत्र में गहन एवं उद्देश्यपरक शिक्षा प्राप्त नहीं कर पाते। मीडिया के क्षेत्र में दी जाने वाली उपाधियों तथा पत्रोपाधियों में व्यापक भिन्नता परिलक्षित होती है। सभी विश्वविद्यालय अपने स्तर पर उपाधियाँ प्रदान करने के लिए स्वतंत्र हैं, परन्तु इन भिन्नताओं के कारण दी जाने वाली उपाधियों के मानकीकरण एवं प्रमाणीकरण को लेकर कई विभेद हैं।

मीडिया पाठ्यक्रमों में एकरूपता लाने का गम्भीर प्रयास नहीं किया जा रहा है। यही कारण है कि मीडिया के क्षेत्र में मिलने वाली उपाधियों को वह सम्मान नहीं मिल पा रहा है, जो अन्य व्यावसायिक उपाधियों को दिया जाता है। शासकीय स्तर पर भी ऐसे प्रयास नगण्य हैं।[15] यूजीसी द्वारा नामकरण, पाठ्यक्रम अवधि तथा पाठ्यक्रम की विषय वस्तु को लेकर एकरूपता लाने का प्रयास किया था लेकिन वे भी गम्भीरता से लागू नहीं किए गए हैं। यद्यपि पाठ्यक्रमों में एकरूपता लाना भी उचित नहीं होगा। भारत एक विशाल देश है जहाँ भौगोलिक, सांस्कृतिक, आर्थिक तथा सामाजिक आधार पर काफी भिन्नताएँ हैं।

ऐसी स्थिति में पत्रकारिता पाठ्यक्रमों को तैयार करते समय स्थानीय परिवेश को आधार बनाना ही होगा। पाठ्यक्रमों का यदि स्थानीय आवश्यकताओं के साथ जुड़ाव नहीं होगा तो वे अपनी प्रासंगिकता खो देंगे। उन पाठ्यक्रमों में न सिर्फ स्थानीयता का पुट हो वरन् वे बाजार की आवश्यकताओं के अनुरूप स्वयं को ढाल सकें। कुछ शिक्षाविदों का मानना है कि यदि समान पाठ्यक्रम योजना लागू करने का प्रयास किया गया तो यह न सिर्फ विश्वविद्यालयों की स्वयत्तता की मूल अवधारणा पर प्रहार होगा, बल्कि रचनात्मक एवं सर्जनात्मक शिक्षण की पद्धति के भी प्रतिकूल होगा।[16] हालांकि अब समय आ गया है जब ऑल इण्डिया काउंसिल ऑफ टेक्निकल एजुकेशन या नेशनल काउंसिल ऑफ टीचर्स एजुकेशन की तर्ज पर एक नियामक संस्था अखिल भारतीय मीडिया काउंसिल का गठन हो जो, पत्रकारिता शिक्षा के स्तर तथा गुणवत्ता पर नियंत्रण रख सके।[17]

शासकीय उदासीनता–

मीडिया शिक्षा के बारे में शासन तंत्र की उदासीनता भी एक चिंता का प्रमुख कारण है। शासन के स्तर पर गहन और शास्त्रीय मीडिया शिक्षा का आरम्भिक उत्साह तो दिखता है पर उसमें निरंतरता और प्रोत्साहन का अभाव रहता है। देश के कई विश्वविद्यालयों में पत्रकारिता और जनसंचार विभाग अपर्याप्त शिक्षकों के सहारे संचालित है।[18] दरअसल भारत में मीडिया शिक्षा मोटे तौर पर चार स्तरों पर होती है– सरकारी विश्वविद्यालयों या कालेजों में, दूसरे निजी विश्वविद्यालय, तीसरे सरकार से स्वायत्तता प्राप्त संस्थान और चौथा किसी निजी चैनल या समाचार पत्र के खोले गये अपने मीडिया संस्थान।

इनमें सबसे कम दावे सरकारी संस्थान करते हैं और दावों की रेस में जीतते हैं– निजी संस्थान। लेकिन विश्वसनीयता के मामले में बात एकदम उल्टी है। स्वायत्त संस्थानों में आईआईएमसी जैसे का ब्रॉड तो खूब बड़ा है किन्तु यहाँ भी शिक्षकों के पद खाली पड़े हैं। चूँकि संस्थान की डोर सूचना प्रसारण मंत्रालय के हाथों में होने की वजह से इसकी चाल कछुए जैसी ही रही है। भारत में 125 डीम्ड विश्वविद्यालय है। इनमें से 102 निजी स्वामित्व वाले संस्थान है।

यहाँ भी शिक्षण संबंधी मूलभूत नियमों की अनदेखी की शिकायतें आती रहीं है। देश के कई विश्वविद्यालयों में पत्रकारिता और जनसंचार विभाग अपर्याप्त शिक्षकों के सहारे संचालित है। कुछ स्थानों पर तो पत्रकारिता और जनसंचार के पाठ्यक्रमों के लिए शिक्षकों के पद भी स्वीकृत नहीं हैं और शेक्सपीयर या सूरदास पढ़ाने वाले ही पत्रकारिता पढ़ाने को मजबूर हैं।[19] अधिकांश संस्थानों और विश्वविद्यालयों में पाठ्यक्रम के व्यावहारिक प्रयोगों के लिए पर्याप्त संसाधन उपलब्ध नहीं है। ऐसे में मीडिया शिक्षा सिर खुजलाती दिखती है। ऐसे में पत्रकारिता और जनसंचार की शिक्षा देने के लिए खुले विशेषज्ञता मूलक संस्थान भी अपने अस्तित्व को बचाने के लिए संघर्षरत रह जाते हैं।[20]

मीडिया संस्थान बनाम कोचिंग की दुकानें–

मीडिया शिक्षा के लिए एक गम्भीर विचारणीय बिन्दु विभिन्न कोचिंग की दुकानें हैं, जो सात दिन से लेकर सात हफ्ते की ट्रेनिंग में सिद्धहस्त मीडियाकर्मी बनाने का दावा करती है। मीडिया और पत्रकारिता देश के उन गिने–चुने क्षेत्रों में से है, जिनमें पिछले दो दशकों में भारी 'उछाल' आया है। इसी के साथ देश भर में पत्रकारों और मीडियाकर्मियों को प्रशिक्षित करने वाले सरकारी, गैर–सरकारी और अर्द्धसरकारी संस्थानों की एक पूरी जमात कुकुरमुत्तों की तरह उग आई है।

ऐसी कोचिंग दुकानों के लुभावने विज्ञापनों को गौर से देखें तो पता चलता है कि वे सपने बेचने का काम बखूबी करते हैं। जिस प्रकार इंजीनियरिंग और दूसरे तकनीकी संस्थानों की मान्यता के लिए बकायदा तकनीकी शिक्षा परिषद है, मेडिकल की पढ़ाई पर निगाह रखने के लिए मेडिकल कौंसिल है। लेकिन मीडिया संस्थानों की लगाम कसने को कोई नियामक संस्था नहीं है। अधिकांश संस्थानों के पास किताबों और लैब का जबर्दस्त टोटा है, बावजूद इसके पढ़ाई चल रही है। निजी संस्थान मोटी फीस के बदले ढेरों सब्जबाग दिखा रहे हैं। जाहिर है जो युवा बिना किसी प्रतिबद्धता के सिर्फ ग्लैमर की चाह में मीडिया में आना चाहते हैं, ऐसी दुकानों की ओर आकृष्ट हो जाते हैं।

ऐसी दुकानों के फलने–फूलने से मीडिया शिक्षा का परिदृष्य प्रभावित हो रहा है।

तकनीक और वैचारिकता का अंतर्द्वन्द्व–

वर्तमान में पत्रकारिता शिक्षण का सबसे बड़ा संकट यह है कि यह अब तक तय नहीं हो पाया है कि पत्रकारिता प्रशिक्षण तकनीकी है या वैचारिक। यह सत्य है कि उदारीकरण के बाद आए मीडिया विस्फोट के इस दौर में जिस तरह तकनीक पर पत्रकारिता अवलम्बित होती गई है, इससे साफ है कि बाजार में तकनीकी कसौटी पर खरे उतरने वाली भावी पत्रकारों की माँग बढ़ गई है। इसके बाद भी पत्रकारिता अन्य तकनीकी विषय (इंजीनियरिंग, मेडिकल) की तरह केवल तकनीक ज्ञान ही नहीं है, बल्कि यहाँ वैचारिकता न सिर्फ पूँजी है, बल्कि एक बड़ा औजार भी है।

अपनी वैचारिकता की पूँजी के माध्यम से भावी पत्रकार मौजूदा घटनाओं के प्रति लोगों को सचेत या फिर उत्साहित करते हैं। ये दृष्टि किसी विश्वविद्यालय या पत्रकारिता शिक्षण–प्रशिक्षण संस्थान की कक्षाओं में हासिल नहीं की जा सकती है। यदि ऐसा होता तो जेम्स ऑगस्टस हिक्की, अम्बिका प्रसाद बाजपेयी या फिर बाबू राव विष्णुराव पराड़कर को याद भी नहीं किया जाता। बहरहाल वर्तमान दौर में बिना खास शिक्षण या प्रशिक्षण के किसी पत्रकार की उम्मीद नहीं की जा सकती है। हकीकत में आज पत्रकारिता शिक्षण अपने उहापोह से मुक्त नहीं हो पाया है कि पत्रकारिता का प्रशिक्षण तकनीकी हो या वैचारिक। इसके लिए पत्रकारिता संस्थान के साथ ही प्रशासन भी जिम्मेदार है।

इसी कमी को ध्यान में रखते हुए प्रेस कौंसिल ऑफ इण्डिया और विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के सहयोग से पत्रकारिता पाठ्यक्रम में एकरूपता लाने और संस्थानों के साथ ही पढ़ाने वालों और संस्थानों के मानकीकरण की दिशा में कदम उठाया है। आवश्यकता इस बात की है कि व्यावसायिक दुनिया की जरूरतों के मुताबिक पत्रकारिता शिक्षा ढले, लेकिन अकादमिकता को भी नजरअंदाज नहीं किया जाए। यह नजरिया न तो अकादमिक दुनिया के लिए मुफीद होगा और न ही अखबारी और टीवी संस्थान को ही फायदा पहुँचा पाएगा। पत्रकारिता की मेधा का जो नुकसान होगा, उसका आकलन तो आने वाली पत्रकारीय पीढ़ियाँ ही कर पाएँगी। अब वक्त आ गया है जब पत्रकारिता शिक्षण की व्यावसायिक जरूरतों के निष्कर्ष की बजाय तकनीकी अनुशासन के साथ ही वैचारिक धरातल पर भी परखा जाए।[22]

पत्रकारिता का भविष्य–

देश में पत्रकारिता के आकदमिक अध्ययन एवं प्रशिक्षण का कोर्स करने वाले छात्र–छात्राओं की संख्या हजारों में है। अध्ययन एवं प्रशिक्षण देने वाले संस्थानों में गैर–सरकारी और सरकारी दोनों शामिल है। सार्वजनिक क्षेत्र के संस्थान केन्द्र सरकार व राज्य सरकारों के अधीन है। केन्द्र सरकार के अधीनस्थ संस्थानों में केन्द्रीय विश्वविद्यालय और सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय के नियंत्रण वाला भारतीय जनसंचार संस्थान जैसी संस्थाएं हैं। राज्य सरकार के अधीनस्थ राज्य विश्वविद्यालय व उनसे सम्बद्ध कॉलेजों में जनसंचार, मीडिया, पत्रकारिता जैसे नामों से विभाग है।

कई संस्थान ऐसे भी हैं जहाँ पत्रकारिता एवं जनसंचार का अध्ययन हिन्दी एवं अंग्रेजी विभाग के अन्तर्गत हो रहा है। इसके अतिरिक्त निजी क्षेत्र के विश्वविद्यालय और संस्थान हैं जहाँ अकादमिक

अध्ययन व प्रशिक्षण दिया जाता है। निजी क्षेत्र के अलावा मीडिया कारोबार करने वाले संगठनों ने भी अपने प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित किए हैं। निजी क्षेत्र के प्रशिक्षण संस्थानों ने डिप्लोमा और डिग्री पाठ्यक्रमों के लिए सरकारी संस्थाओं से व्यवसायी समझौते कर रखे हैं। वर्तमान में अधिकतर सरकारी संस्थानों में सेल्फ फाइनेंस कोर्स यानी छात्र–छात्रों के पैसे से कोर्स चल रहे हैं। लोकतंत्र के लिए पत्रकारिता और उसके लिए प्रशिक्षण का पहलू प्रशिक्षण संस्थानों के विस्तार के बाद गौण होता चला गया है।

देश में पत्रकारिता के अध्ययन और व्यावहारिक प्रशिक्षण की इस पृष्ठभूमि से स्पष्ट है कि असमान स्थितियों और विभिन्न प्रकार के अन्तर्विरोधों के बीच पत्रकारिता का भविष्य तैयार हो रहा है। पत्रकारिता को व्यवसाय के लिए अध्ययन का क्षेत्र बनाने पर ज्यादा जोर दिखता है न कि लोकतंत्र के लिए भविष्य की पत्रकारिता को एक शक्ल देने की कोई ठोस योजना है। लोकतांत्रिक मूल्यों और विचारों के आलोक में नीतिगत स्तर पर पत्रकारिता की कोई ठोस शक्ल सूरत नहीं होने की स्थिति में यह आवश्यक हो चला है कि हम भविष्य की पत्रकारिता का एक आकलन करें।[23]

निष्कर्ष–

प्रश्न सिर्फ बदलती पत्रकारिता की तकनीक को समझने का ही नहीं है, बल्कि सवाल उन बुनियादी मुद्दों का भी है, जो पत्रकारिता को अर्थवान बनाते हैं। इसलिए जरूरी है कि पत्रकारिता के प्रशिक्षण में बदलती तकनीक और बदलते संदर्भों को भी शामिल किया जाये। इसके साथ–साथ इतिहास, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र की बारीकियों को भी पढ़ाया–समझाया जाये। तभी युवा पीढ़ी अपने पेशे के प्रति ईमानदार होगी। समाज में अपने दायित्वों के प्रति जागरूक होगी। व्यावसायिकता की जरूरतों को समझने के साथ यह भी समझे कि पत्रकारिता एक विशिष्ट व्यवसाय है। घटनाओं को पूरे सन्दर्भों में समझना–समझाना एवं मानवीय दृष्टिकोण से प्रस्तुत करना पत्रकारिता की महती आवश्यकता है। यह सभी पत्रकारिता के प्रशिक्षण का हिस्सा होना चाहिए। तभी प्रशिक्षण सार्थक सिद्ध होगा, पत्रकारिता सार्थक बनेगी।

सन्दर्भ–

1. ठाकुर्ता, परंजय गुहा का लेख, ''पत्रकारिता की शिक्षा : कुछ सरोकार', विदुर, प्रेस इंस्टीट्यूट ऑफ इण्डिया की पत्रिका, अप्रैल–जून 2007, अंक–2, वर्ष 44, पृ० 23.
2. जोशी, सच्चिदानन्द का लेख ''मीडिया शिक्षा–कुछ नए पहलू', विदुर, अप्रैल–जून 2006, वर्ष 43, अंक–2, पृ० 32.
3. ठाकुर्ता, परंजय गुहा का लेख, उपर्युक्त, पृ० 23.
4. जोशी, सच्चिदानन्द का लेख, उपर्युक्त, पृ० 34.
5. प्रधान, आनन्द के ब्लॉग 'तीसरा रास्ता, कॉम'.
6. ठाकुर्ता, परंजय गुहा का लेख, उपर्युक्त, पृ० 26.
7. उपासने, जगदीश का लेख, 'यह दौर मीडिया के कायाकल्प का', साहित्य अमृत, मीडिया विशेषांक, अगस्त 2015, पृ० 82.
8. ठाकुर्ता, परंजय गुहा का लेख, उपर्युक्त, पृ० 24.

9. उपासने, जगदीश का लेख, 'उपर्युक्त, पृ० 83.
10. कुमार, विनय, जनसंचार एवं पत्रकारिता, द्वितीय संस्करण : 2013, उपकार प्रकाशन, आगरा, पृ० 287.
11. उपर्युक्त, पृ० 285, 286.
12. उपासने, जगदीश का लेख, उपर्युक्त, पृ० 83.
13. कौल, जवाहरलाल का लेख, ''कैसे आए प्रशिक्षण में मानकता?' 'मीडिया मीमांसा', अक्टूबर–दिसम्बर, 2009, पृ० 11.
14. दयाल, डॉ० मनोज एवं कुमार पंकज का लेख ''मीडिया शिक्षा में शोध की जरूरत', मीडिया–मीमांसा, अक्टूबर–दिसम्बर, 2009, पृ० 26, 27, 28.
15. जोशी, सच्चिदानन्द का लेख, उपर्युक्त, पृ० 34, 35.
16. भनावत, संजीव का लेख ''कितनी जरूरी है पाठ्यक्रमों की एकरूपता?'' मीडिया मीमांसा, अक्टूबर–दिसम्बर, 2009, पृ० 14.
17. जोशी, सच्चिदानन्द का लेख, उपर्युक्त, पृ० 35.
18. उपर्युक्त, 36.
19. नन्दा, वर्तिका का लेख ''बिन शिक्षक सब सून', मीडिया–मीमांसा, अक्टूबर–दिसम्बर, 2009, पृ० 33.
20. जोशी, सच्चिदानन्द का लेख, उपर्युक्त, पृ० 36.
21. उपर्युक्त, पृ० 35.
22. चतुर्वेदी, उमेश का लेख 'तकनीक और वैचारिका का अन्तर्द्वन्द्व' मीडिया–मीमांसा, अक्टूबर–दिसम्बर 2009, पृ० 35, 36, 37.
23. जन मीडिया, वर्ष–4, अंक–48, मार्च 2016 द्वारा कराये गये सर्वे ''पत्रकारिता का भविष्य : पत्रकारिता संस्थानों में एक सर्वेक्षण' के अंश।

Vol. II, Issue XIV – June 2016
Article ID # 1001
Peer–Review Refereed Research Journal
ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

शिक्षा और नाटक

विशाल भट्ट, शोध छात्र, नाट्य विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, राजस्थान

व्यक्ति और समाज के लिये शिक्षा का महत्व उतना कभी नहीं समझा गया जितना आज समझा जा रहा है। आज शिक्षा संस्थाओं में शिक्षा से अधिक बालक की ओर ध्यान दिया जाता है। अब तक पाठ्य विषय के ज्ञान और विद्वता का ही महत्व हुआ करता था, किन्तु अब सब बात बदल रही है। आज यह आवश्यक नहीं कि विद्वान व्यक्ति ही शिक्षक हो। साधारण ज्ञान वाले भी महान शिक्षक हो सकते है। उनके लिये शिक्षा नहीं वरन् बालक प्रधान विषय होता है। वे बालकों के जीवन का अध्ययन करते हैं। इस प्रकार शिक्षा के स्वरूप में पिछले कुछ दशकों में अपूर्व क्रान्ति हुई है और यह क्रान्ति आसन्न भविष्य में और अधिक तीव्रतर होने वाली है।

मुख्यतः शिक्षा के तीन प्रमुख केन्द्र है जहाँ से व्यक्ति शिक्षा प्राप्त करता है–

1. घर
2. स्कूल तथा कॉलेज
3. समाज

बालक अपने घर एवं स्कूल से शिक्षा प्राप्त करता है तथा प्राप्त की गई शिक्षा का समाज में प्रयोग करता है, वहां से उसे कुछ अनुभव प्राप्त होते हैं यही अनुभव उसकी वास्तविक शिक्षा होती है। कहते है कि असली शिक्षा वही है जो पढ़ी हुई बाते भूल जाने के बाद बच जाती है। शिक्षा के प्रमुखतः 7 उद्देश्य होते है जिन्हें प्राप्त करने के लिये शिक्षा की आवश्यकता होती हैं।

1. जीविका पार्जन का उद्देश्य
2. ज्ञान प्राप्ति का उद्देश्य
3. सही जीवन जीने का उद्देश्य
4. चरित्र बनाने का उद्देश्य
5. संस्कृति को समझने का उद्देश्य
6. समाज से जुड़ने का उद्देश्य

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

शिक्षा को नाटक से जोड़ने पर अनुभव होता है कि नाट्यकला के भी प्रमुख उद्देश्य वहीं है जो शिक्षा के उद्देश्य है। इसी कारण नाटक द्वारा शिक्षा देने की बात आज जोर शोर से चल रही है।

नाटक क्या है? विद्वानों ने नाटक का चाक्षुष यज्ञ कहा है। यह दृश्य काव्य है। सभी प्रकार की कलाओं में ललित कला को श्रेष्ठ माना गया है तथा ललित कला में दृश्य काव्य सर्वश्रेष्ठ है, क्योंकि इसके अन्तर्गत पांच कलाये यथा संगीत, नृत्य, चित्रकला, मूर्तिकला एवं स्थापत्य कला अपना स्थान रखती हैं।

यह दृश्य काव्य अर्थात् नाटक आँखों के माध्यम से दिल को चमत्कृत करता है। नाटक में होने वाली वास्तविकता का एहसास इसे कहानी अथवा उपन्यास से भिन्न बनाता है।

नाट्य शास्त्र के रचियता ने नाटक की परिभाषा देते हुये ''अवस्थानुकृति नाट्यम'' कहा हैं। उनका कहना था मानव जीवन की विभिन्न परिस्थितियों के अनुकरण अर्थात् उनकी नकल का नाम ही नाटक है। नाटक के अन्तर्गत तीनों लोकों के भावों का अनुकरण रहता है।

मोर को नाचते देखते हैं तो हमें अच्छा लगता है। अबोध बालक को हंसते हुये देखकर मन प्रसन्न हो उठता है। कोयल की कूक मन में हिलोरे भरने लगती है। कोई बच्चा तुतलाता है तो हम भी उसके साथ तुतलाने लग जाते है। यही तो नाटक की शुरूआत है। सुख दुख से उत्पन्न भावनाओं का अनुकरण के रूप में सक्रिय हो जाना नाटक की भावना को जन्म देता है।

नाटक महत्वपूर्ण क्यूं? नाटक जीवन से सीधे रूप में जुड़ा हुआ है। इसके अन्तर्गत जीवन के सुख–दुःख, आनन्द–विलास, भला–बुरा सभी का सजीव चित्रण होता है, यह रसिकजनों को अपनापन महसूस कराता है। यह अपनापन ही इसे महत्वपूर्ण बनाता है।

एक शोध के अनुसार कहा जाता है कि एक व्यक्ति को अपने जीवन में सुनी हुई बाते 30 प्रतिशत तक याद रहती है। जबकि देखी हुई बातों को व्यक्ति 50 प्रतिशत तक याद रख पाता है, लेकिन अगर किसी बात को देखा और सुना एक साथ जाये तो वो बात 70–80 प्रतिशत तक याद रह जाती है अर्थात् दृश्य श्रव्य (Audio-Visual) का महत्व बढ़ जाता है और नाटक एक दृश्य श्रव्य माध्यम है।

यहाँ यह प्रश्न अवश्य उठता है कि नाटक यदि दृश्य श्रव्य माध्यम है तो टी.वी. भी दृश्य श्रव्य माध्यम है और सिनेमा भी फिर भी नाटक ज्यादा महत्वपूर्ण क्यों है? वो इसलिये कि टी. वी. वास्तविकता को वास्तविक रूप से छोटा करके दिखाता है जबकि बड़ा पर्दा अर्थात् सिनेमा वास्तविकता को वास्तविकता से बड़ा करके दिखाता है, जबकि नाटक वास्तविकता को वास्तविक रूप में दिखाता है। नाटक में प्रस्तुत पात्रों को हम छू सकते है उसकी घटनाओं को महसूस कर सकते हैं, इस कारण नाटक अतिमहत्वपूर्ण हो जाता है।

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

स्पष्ट है कि जहां शिक्षा मानव जीवन में विशेष प्रभाव डालती है वहीं नाटक भी मानव जीवन को श्रेष्ठ बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यदि हम नाटक और शिक्षा दोनों से पड़ने वाले सामान्य प्रभाव की बात करे तो हमें ज्ञात होता है दोनों के द्वारा अग्रलिखित उद्देश्यों की पूर्ति होती हैं।

1. भाषायी कौशल का विकास होता है।
2. समूह भावना विकसित होती है।
3. बात को कम्युनिकेट करना आसान होता है।
4. ज्ञान बढ़ता है। जागरूकता बढ़ती है।
5. आत्मविश्वास में वृद्धि होती है।
6. सकारात्मक सोच उत्पन्न होती है।
7. त्वरित बुद्धि का विकास होता है।
8. याददाश्त बढ़ती है।
9. जीवन जीने की कला का विकास होता है।
10. लक्ष्य के प्रति ललक बढ़ती है।
11. ध्यान के स्तर में वृद्धि होती है।
12. प्रदर्शन शक्ति का विकास होता है।
13. मैत्री भाव बढ़ता है।
14. चारित्रिक निर्माण में सहायता मिलती है।
15. बोलने की कला में सुधार होता है।
16. सही गलत का भान होता है।
17. अच्छी आदते डलना शुरू होती है।
18. मनोभावों पर अंकुश लगता है।

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि नाटक एवं शिक्षा दोनों ही अपने उद्देश्य और प्रभावों के आधार पर समानता रखती हैं। यही कारण है कि आज शिक्षा की अब तक जितनी भी प्रणालियां प्रचलन में आायी हैं, चाहे वह सुकरातीय प्रणाली हो जो ज्ञात से अज्ञात की बात कहती है, चाहे हॉरबार्टिंग प्रणाली हो जिसमें बहुमुखी अभिरूचि उत्पनन करते हुये चरित्र के निर्माण की बात कही जाती है, चाहे पेस्तोलॉजी एवं जानलॉक की स्वानुभव पर आधारित प्रणाली हो या किन्डरगार्डन, मोन्टेसरी या प्ये वे प्रणाली हो जो खेल, संगीत और उपकरणो से शिक्षा देने वाली प्रणाली हो, सभी में नाटक के माध्यम से शिक्षा देने वाली प्रणाली

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

सबसे प्रभावी है। इस प्रणाली में अन्य सभी प्रणाली के गुण मौजूद हैं। यह ना भूलें कि शिक्षा का केन्द्र विद्यार्थी है और शिक्षक का कार्य है विद्यार्थी की इच्छा को सही दिशा की और मोडना ।

नाट्य प्रणाली द्वारा शिक्षा से यह कार्य आसानी से किया जा सकता है।

संदभ सूची–

1 भरत और भारतीय नाट्य कला – सुरेन्द्र नाथ दीक्षित
2 नाटय पद्वति द्वारा शिक्षण – चन्द्रशेखर भट्ट
3 रंग प्रसंग – बाल रंगमंग विशेषांक
4 नाटक का रंग विधान – विश्व नाथ मिश्र
5 नाटक की परख – एस पी खत्री
6 रंग साक्षात्कार – जयदेव तनेजा

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

Vol. II, Issue XIV – June 2016
Article ID # 1002
Peer–Review Refereed Research Journal
ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

राम और कृष्ण के स्वरूप का तुलनात्मक अध्ययन

'असमानता'

प्रो. (डां0) जी. डी. शर्मा, विभागाध्यक्ष (योग विज्ञान)
पतंजलि विश्वविद्यालय, हरिद्वार

विरेन्द्र कुमार, सहायक प्राध्यापक, चौ0 रणबीर सिंह विश्वविद्यालय, जींद, हरियाणा

ण्असमानता (श्रीराम व श्रीकृष्ण) त्रेता युग में श्रीराम का अवतार होता है तो द्वापर में श्रीकृष्ण इस धरा पर आते हैं। राम की लीला चित्रकूट में सम्पन्न होती है तो कृष्ण की लीला वृंदावन में होती है। राम को मर्यादा पुरुषोत्तम तथा कृष्ण को लीला पुरुषोत्तम कहा गया है। किन्तु यह अर्धसत्य है, दोनों ने ही लीला और मयादा का निर्वहन किया। अंतर केवल मात्र यह है कि कृष्ण के चरित्र में मर्यादा प्रत्यक्ष रूप से इतनी प्रकट नहीं होती जितनी की राम के चरित्र में दिखती है। सत्य के विषय में यह धारणा है कि राम पूर्ण सत्यवादी है, परन्तु कृष्ण धर्म की रक्षा के लिए अवसर आने पर असत्य भी बोल देते हैं। फिर भी कृष्ण का असत्य भी ईश्वरीय सत्य रहता है। दोनों के सत्य में अन्तर है, जीव और ब्रह्म का। राम का सत्य एक रस है, जीव और ब्रह्म के लिये समान है, जबकि कृष्ण का सत्य एक पक्षीय, ईश्वर का सत्य है। अतः कृष्ण के सत्य में जीव और ईश्वरीय सत्य में कभी–कभी टकराव हो जाता है।[1]

कृष्ण की जन्म से पूर्व ही प्रसिद्धिः– कृष्ण ही एक मात्र ऐसे महामानव है, जिनकी ख्याति जन्म से पूर्व ही हो गयी थी। उनके भावी व्यक्तित्व की चर्चा उसी दिन से प्रारम्भ हो गयी। जिस दिन अत्याचारी कंस ने उनकी माता देवकी और पिता वासुदेव को कारागार में डाल दिया। जन सामान्य लोग भी चर्चा करते थे कि देवकी के गर्भ में जन्म लेने वाला आठवां बालक कंस की मृत्यु का कारण बनेगा। कृष्ण का जन्म इस दृष्टि से भी उल्लेखनीय है

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

कि उनका जन्म कारागार में हुआ। जबकि राम का जन्म राजमहल में हुआ। इसीलिए उनके जन्म को वह प्रसिद्धि पाप्त नहीं है जो कृष्ण को है। यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि राम अपनी आयु के चौदहवें वर्ष में लोक–संग्रह (लोक–सेवा) के क्षेत्र में पदार्पण करते हैं, जब ऋषि विश्वामित्र उन्हें यज्ञ–रक्षार्थ अपने साथ लक्ष्मण सहित वन में ले जाते है। किन्तु कृष्ण लोक संग्रह क्षेत्र में जन्म से ही लग जाते हैं।[2]

कृष्ण की सभी बातें अलौकिक है। उनकी लीलाएं जन्म से ही आरम्भ हो जाती है। उनकी दिव्य शक्तियाँ तभी से अप्रतिहतरूप से अपना प्रसार दिखाती हैं। अघासुर, बकासुर आदि असुरों तथा ब्रह्मा, इन्द्र आदि सुरों के साथ उन्होंने बचपन से ही युद्ध प्रारम्भ कर दिया था। उन्हें पढ़ने–लिखने या सीखने की परतंत्रता नहीं थी। यदि होती तो सन्दीपनि मुनि का पुत्र कैसे आता? क्या यह विद्या उन्होंने किसी से सीखी थी? यदि सन्दीपनि को यह विद्या आती होती तो वे स्वयं ही अब तक अपने पुत्र को क्यों न ले आये होते? शायद इसीलिए राम को अंशावतार और कृष्ण को पूर्णावतार बताते हैं।[3]

अब इनके ज्ञान का अनुमान लगाइये– ताण्डव और लास्य दो–दो प्रकार के प्राचीन नृत्य प्रसिद्ध है। श्रीकृष्ण ने एक तीसरी नृत्यकला की सृष्टि की, जो शिवनृत्य (ताण्डव) और पार्वतीनृत्य (लास्य) इन दोनों से विलक्षण तथा चमत्कारी थी। जो व्यक्ति क्रोधोन्मत्त भीषण भुजंगम के फनों पर नाच सकता हो, उसकी शरीर साधना चरण–लाघव (कौशल) और लोकोत्तर कला में किसे संदेह हो सकता है? संगीत में आज चार मत प्रसिद्ध हैं– 1. नारदमत संगीत, 2. भरतमत संगीत, 3. हनुमन्मत संगीत, 4. श्री कृष्णमत संगीत इनमें अन्तिम (श्रीकृष्णमत संगीत) सबसे कठिन और चमत्कारिक बताया जाता है।

और देखिये युद्ध की शिक्षा तो आपने सान्दीपनि मुनि के अखाड़े में पायी थी, परन्तु हजारों हाथियों का बल रखने वाले कंस और चाणूर को पराजित करने की विद्या कहां सीखी थी? संगीत तो सीखा उज्जैन के आचार्य–कुल में जाकर, परन्तु कालिय–मर्दन का नृत्यु किसने सिखाया? गोप और गोपियों का हृदयार्षक संगीत कहां से आया? त्रिभुवन मोहिनी मुरली की शिक्षा किसने दी? घोड़े हांकने में मातलि (इन्द्र के सारथि) को भी मात करने की करामात इन्हें किसने दी थी।[4]

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

हरण कर मित्र विन्दा से विवाहः– अवन्ती (उज्जैन) देश के राजा थे विन्द और अनुविन्द। वे दुर्योधन के वशवर्ती तथा अनुयायी थी। उनकी बहन मित्रविन्दा ने स्वयंवर में श्रीकृष्ण को ही अपना पति बनाना चाहा। परन्तु विन्द और अनुविन्द ने अपनी बहन को रोक दिया। मित्रविन्दा कृष्ण की बुआ राजाधिदेवी की कन्या थी। श्रीकृष्ण ने मित्र विन्दा के मनोभाव को जानकर राजाओं की भरी सभा में उसे बलपूर्वक हर ले गये, सब लोग अपना सा मुँह लिये देखते ही रह गये।[5]

हरण कर रूक्मिणी से विवाहः– यह माना जाता है कि कृष्ण तथा रूक्मिणी एक दूसरे के गुणों को सुनकर परस्पर प्रेमासक्त हो गये थे। रूक्मिणी के भाई रूक्मी के अतिरिक्त अन्य सभी परिवार जन भी इस सम्बन्ध के समर्थक थे। रूक्मी शिशुपाल से ही अपनी बहन का विवाह करना चाहता था क्योंकि वह कृष्ण से बड़ा द्वेष रखता था। अतः उसने स्वयंवर का आयाजन कर दिया। रूक्मिणी ने अपनी अपहरण करने के आमंत्रण के साथ एक विश्वास–पात्र ब्राह्मण को कृष्ण के पास भेजा। कुल परम्परा के अनुसार विवाह के पहले दिन कुल देवी के मन्दिर में जाते समय रूक्मिणी के अपहरण का समय भी निश्चित किया गया। योजना के अनुसार स्वयंवर से पूर्व हो राजाओं और महाराजाओं की उपस्थिति में कृष्ण रूक्मिणी का हरण कर लाये।[6] दूसरी ओर राम जनक की प्रतिज्ञा पूर्ण करके सीता को लाते हैं।

कृष्ण की अनेक पत्नियाँः– यह माना जाता है कि कृष्ण की सोलह सहस्त्र एकशत पत्नियाँ थी। उनमें से रूक्मिणी, सत्यभामा, जाम्बवती, चारूहासिना आदि आठ पत्नियाँ प्रमुख थीं।

रसिक– शिरोमणि कृष्णः– हेमन्त ऋतु के प्रथम मास में गोपियों ने मास पर्यन्त काव्यायनी देवी का व्रत रखा था। वे प्रतिदिन उषाकाल में ही यमुना में स्नान करने के लिए जाती। एक दिन सब कुमारियों ने प्रतिदिन की भांति ही यमुना के तटपर जाकर अपने–अपने वस्त्र उतार दिये और बड़े आनन्द से जल–क्रीड़ा करने लगी। उस अवधि में कृष्ण वहां आए और सभी गोपियों के सारे वस्त्र उठा लिये और बड़ी फुर्ती से वे एक कदम्ब के वृक्ष पर चढ़ गये। स्नान के उपरान्त गोपियों ने कृष्ण से अपने वस्त्रों को लौटाने की याचना की परन्तु रसिक–शिरोमणि कृष्ण ने नाना भांति से उन गोपियों को खूब छकाया।[7] ऐसा रस चित्रण राम का नहीं प्राप्त होता।

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

कुरूक्षेत्र के युद्ध में कृष्ण सारथी की भूमिका में है। इस युद्ध में वह वचन देते है कि मैं अस्त्र-शस्त्र ग्रहण नहीं करूंगा। युद्ध को सक्रिय भूमिका अर्जुन निभाते है। जबकि लंका के युद्ध में राम अस्त्र-शस्त्र ग्रहण करके युद्ध की सक्रिय भूमिका में दिखते हैं। धर्म की स्थापना के लिए राम स्वयं युद्ध करते हैं। राम स्वयं हथियार उठाते हैं। परन्तु धर्म रक्षा हेतु कृष्ण स्वयं हथियार न उठाकर अर्जुन को प्रेरित करते हैं। लंका युद्ध में राम स्वयं अस्त्र-शस्त्र उठाकर भी यह घोषणा नहीं करते की यह युद्ध मैंने जीता है या रावण व अन्य राक्षसों का वध मैंने किया है। युद्ध समाप्त होने पर राम वानरों, भालुओं के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए उन सभी को कहते है कि मैं आपका बहुत आभारी हूँ, आप ही के बल से मैंने रावण को मारा।[8]

लेकिन कुरूक्षेत्र के युद्ध में श्रीकृष्ण यह घोषणा करते हैं कि हे अर्जुन जिनको तू मारने जा रहा है उनको मैंने पहले ही मारा हुआ है। कृष्ण अपने स्वजनों के कुटुम्ब-परिवारों के सम्बन्धियों के दिव्य हितेषी और हित-साधक थे, परन्तु धर्म विरोधी होने पर वे किसी को स्वजन-कुटुम्बी के नाते क्षमा नहीं करते। कंस सगे मामा थे, पर अधार्मिक होने के कारण स्वयं कृष्ण ने उनका वध किया। शिशुपाल तो पाण्डवों के सदृश ही कृष्ण की बुआ का लड़का था, पर पापाचारी था; अतएव कृष्ण ने उसको दण्ड दिया। कृष्ण को धर्म की रक्षा के लिए जहाँ अपने सगे संबंधियों को भी मारना पड़ता है। राम में यह सब दिखाई नहीं पड़ता।

कृष्ण द्वारा अपने ही वंश का संहार:- ब्रह्मा के स्तवन तथा अनुरोध को सुनकर कृष्ण ने प्रत्युत्तर दिया वह यह कि यदुवंशी बल विक्रम, वीरता, शूरता और धन सम्पत्ति से उन्मत्त हो रहे हैं। ये सारी पृथ्वी को ग्रास लेने पर तुले हुए हैं। इन्हें मैंने ठीक वैसे ही रोक रखा है, जैसे समुद्र को उसके तट की भूमि रोकती है। यदि मैं घमंडी और उच्छ्रखल यदुवंशियों का यह विशाल वंश नष्ट किये बिना ही चला जाऊँगा तो यह सब मर्यादा का उल्लंघन करके सारे लोकों का संहार कर डालेंगे। अत: इस कार्य को पूर्ण करके ही मैं अपने लोक को गमन करूंगा।[9] अत: कृष्ण में न्याय व वैराग्य की पराकाष्ठा है। अपने ही स्वजनों को पृथ्वी का भार समझकर संहार कर दिया। जबकि राम को अपने पुरवासियों के प्रति असीम ममता है।[10]

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

रामराज्यः– रावण वध के पश्चात् लंका पर विभीषण शासन करने लगता है और मंगलमय रामराज्य की स्थापना होती है। सभी प्रमाण रामराज्य को अद्वितीय **'न भूतो न भविष्यति'** के रूप में प्रस्तुत करते हैं– श्रीरामचन्द्र के राज्य पर प्रतिष्ठित होने पर तीनों लोक हर्षित हो गये, उनके सारे शोक जाते रहे। कोई किसी से वैर नहीं करता। राम के प्रताप से सब की विषमता मिट गयी। उन्हें न किसी बात का भय है, न शोक हैं और न कोई रोग ही सताता है।[11] जबकि महाभारत के युद्ध की परिणति किसी ऐसी आदर्श राज्य के संस्थापन में नहीं होती। इसे अधिक से अधिक न्याय की अन्याय पर विजय कह सकते हैं।

राम भाग्यवादी हं– वनवास होने पर राम दैव को ही सर्वशक्तिमान कर जहां स्वयं शान्त रहे वहीं इस समस्त घटना–कर्म में माता कैकेयी अथवा पिता को दोषी नहीं माना। उनका मानना है जिन कृत्यों का कारण स्पष्ट नहीं होता, दैवाधीन मानने में ही सान्त्वना है। मनुष्य को उसके भाग्य के अनुसार सुख–दुख मिलता है। यथा– मेरा राज्य छिन गया, वनवास मिल गया, सीता का अपहरण हो गया और मेरे सहायक पक्षीराज भी मारे गये, यह मेरा परम दुर्भाग्य तो अग्नि को भी भस्म कर सकता है।[12] जबकि कृष्ण भाग्यविधाता की भूमिका में दिखते हैं।

अश्रुपात करते रामः– राम के जीवन में कई बार ऐसे प्रसंग आए जब राम की आंखों में आंसू देखे गये। सीता अपहरण के बाद उसके द्वारा फेंके हुए आभूषणों को देखकर राम का भीतर दबाया हुआ शोक आंसुओं के रूप में फूट पड़ा। लंका युद्ध में मूर्च्छित हुए लक्ष्मण को देखकर तथा रावण वध के बाद जब राम–सीता से मिले उस समय भावविह्वल राम की आंखों में आंसू आ गए तथा सीता के पाताल प्रवेश के उपरान्त दुःखी राम अश्रु प्रवाहित करने लगे। जबकि कृष्ण को रोते नहीं देखा गया।

रावण वध के पश्चात सीता से मिलने के बाद राम ने जो कुछ कहा, वह राजा रूप में न्यायसंगत होने पर भी पति रूप में शोभा नहीं देता। यथा–मेरे समक्ष स्थित तुम्हारा चरित्र सन्देहास्पद हो गया ह। अतः नेत्ररोगी के लिए दीपक जिस प्रकार दुःखद होता है उसी भांति तुम्हारा दर्शन मेरे लिए दुःखदायी है। हे जनकनन्दिनी, मैं अनुमति देता हूँ तुम्हारा जहां मन हो चली जाओ, ये दसों दिशाएं उन्मुक्त हैं। मुझे तुमसे कोई प्रयोजन नहीं है। कौन ऐसा कुलीन तेजस्वी पुरुष होगा जो परगृहवास करने वाली स्त्री को केवल सौहार्दभाव के कारण स्वीकार कर लेगा।

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

रावण के अंक से दूषित हुई तथा उसकी कुदृष्टि का भाजन बनी हुई को मैं कैसे स्वीकार कर सकता हूँ। जबकि मैं स्वयं को महान् कुल का बताता हूँ अतः इच्छित स्थान को चली जाओ। यह मेरा निश्चित विचार है।[13]

राम कहते हैं- हे नरश्रेष्ठ बन्धुओं! मैं लोकनिन्दा के भय से अपने प्राणों को और आप सबको भी छोड़ सकता हूँ। फिर सीता को त्यागना कौन बड़ी बात है।[14]

दूसरी तरफ भौमासुर द्वारा अपहरण कि हुई सोलह हजार कन्याओं को कृष्ण ने न केवल मुक्त करवाया बल्कि जब राजकुमारियों ने अन्तः पुर में पधारे हुए कृष्ण को देखा, तब वे मोहित हो गयी और उन्होंने उनकी अहैतुकी कृपा तथा अपना सौभाग्य समझकर मन-ही-मन कृष्ण को अपने परम प्रियतम पति के रूप में वरण कर लिया। उन कन्याओं में से प्रत्येक ने अलग-अलग अपने मन में यही निश्चित किया कि-ये कृष्ण ही मेरे पति हों और विधाता मेरी यह अभिलाषा पूर्ण करें। कृष्ण ने उनकी भावना को समझकर उन समाज-परित्यकता कुमारियों को अभय प्रदान किया तथा उनकी इच्छा का सम्मान करते हुए उनको सुन्दर-सुन्दर निर्मल वस्त्राभूषण पहनाकर पालकियों से अपनी राजधानी द्वारिका भेज दिया।[15]

राम बालकपन से ही प्रतिदिन मृगों का शिकार करते हैं।[16] कृष्ण किसी भी जीव का शिकार नहीं करते। कई बार राम को निराशा, शोक, विषाद व चिन्ता से ग्रस्त देखा गया। जबकि कृष्ण के दर्शन में निराशा, पलायनवाद और आत्महत्या को कोई स्थान नहीं। पौराणिक मान्यता के अनुसार कृष्ण का लीलाकाल राम की तुलना में अत्यधिक संक्षिप्त था- केवल 128 वर्ष। जबकि राम का लीला काल-13000वर्ष।[17]

कृष्ण का जीवन लीलामय है जबकि राम का जीवन गंभीर है। कृष्ण नृत्य कर रहे हैं, बांसुरी बजा रह हैं, गोपियों से प्रेम कर रहे हैं। राम के प्रत्येक कृत्य में मर्यादा है, वंश परम्परा की प्रतिष्ठा है राम एक जनसामान्य धोबी के कहने पर सीता को त्याग देते हैं या सीता की अग्नि परीक्षा लेते हैं। कृष्ण के जीवन को देखने के बाद यह लगता है कि यदि कृष्ण राम के स्थान पर होते तो वह ऐसा नहीं करते। राम को मर्यादा पुरुषोत्तम तथा कृष्ण को लीला पुरुषोत्तम कहा जाता है। किन्तु यह अर्धसत्य है। दोनों ने ही लीला और मर्यादा का निर्वहन किया। अन्तर

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

केवल इतना ही है– कृष्ण के चरित्र में मर्यादा प्रत्यक्ष रूप से इतनी नहीं दिखती जितनी राम के जीवन में दिखती है।

1. अश्विनी कुमार, मानस् सतसंग श्रीराम गीता, (कोलकाता: सुयश प्रकाशन, 2006), पृ.145
2. रमेशचन्द्र यादव, ज्योतिर्मयजनार्दन, (मुरादाबाद: गुंजन प्रकाशन, 2008), पृ.379
3. श्री कृष्णांट अगस्त 1931, (गोरखपुर: गीताप्रेस), पृ.51
4. वही, पृ.50–51
5. विन्दानुविन्दावावन्त्यौ दुयोधनवशानुगौ।

   स्वयंवरे स्वभगिनीं कृष्णे सक्तां न्यषेधताम्।।

   राजाधिदेव्यास्तनयां मिश्रविन्दां पितृष्वसु:।।

   प्रसह्य हृतवान् कृष्णो राजन् राज्ञां प्रपश्यताम्।। भा.पु./10/58/30–31
6. वही/10/52/16–44
7. भा.पु./10/22/3–27
8. तुम्हरें बल मैं रावनु मारयो। रा.च.मा./लंका./117(ख)/2
9. तदिदं यादवकुलं वीर्यशौर्यश्रियोद्धतम्।

   लोकं जिघृक्षद् रूद्धं मे वेलयेव महार्णव:।

   यद्यसंहृत्य दृप्तानां यदूनां विपुलं कुलम्।

   गन्तास्म्यनेन लोकोऽयमुद्वेलेन विनङ्क्ष्यति।। भा.पु./11/6/29–30
10. प्रनवउँ पुर नर नारि बहोरी। ममता जिन्ह पर प्रभुहि न थोरी।। रा.च.मा./बाल./15/1
11. राम राज बैठें त्रैलोका। हरषित भए गए सब सोका।।

    बयरू न कर काहू सन कोई। राम प्रताप बिषमता खोई।।

    चलहिं सदा पावहिं सुखहि नहिं भय सोक न रोग।। वही/उत्तर./19/4, 20
12. राज्यं भ्रष्टं वने वास: सीता नष्टा मृतो द्विज:।

    ईदृशीयं ममालक्ष्मीर्दहेदपि पावकम्।। वा.रा./अरण्य./67/24
13. वही/115/1–25
14. अप्यहं जीवितं जह्यां युष्मान् वा पुरूषर्षभा:।

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

अपवादभयाद् भीतः किं पुनर्जनकात्मजाम।। वही/उत्तर./45/14, 15

15. भा.पु./10/59/32-36

16. पावन मृग मारहिं जियँ जानो। दिन प्रति नृपहि देखावहिं आनी।। रा.च.मा./बाल./204/1

17. रामकिंकर, मानस एवं गीता का तुलनात्मक विवेचन, (अयोध्याः रामायणम् ट्रस्ट, 2010) पृ.61

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

Vol. II, Issue XIV – June 2016
Article ID # 1003
Peer–Review Refereed Research Journal
ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

कहानी सुनाने की वाचिक परंपराः एक अध्ययन छत्तीसगढ के ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के संदर्भ में

अभिषेक कटियार, रिसर्च स्कालर मीडिया स्टडीज
डॉ राजेंद्र मोहंती, विभागाध्यक्ष इलेक्ट्रानिक मीडिया विभाग
कुशाभाऊ ठाकरे पत्रकारिता एवं जनसंचार विश्वविद्यालय छत्तीसगढ रायपुर
abhiraj680@gmail.com
Contact: 07415124573

कहानी हिंदी वैसे तो गद्य लेखन की एक विधा है जिसका विकास उन्नीसवीं सदी में से हुआ ऐसा माना जाता हैं। इसे बंग्ला में गल्प कहा जाता है। मानव के जन्म के साथ ही कहानी का भी जन्म हुआ और कहानी कहना तथा सुनना मानव का स्वभाव बन गय। इसी कारण से प्रत्येक सभ्य समाज में कहानियां पाई जाती रहीं है। हमारे देश में कहानियों की बडी समृद्ध परंपरा रही है। हमारे सामाजिक जीवन में कहानियों का बडा महत्व रहा है। हमारे देश में घरों में बच्चों को उनके दादा दादी ,माता पिता या फिर परिवार के अन्य बडे सदस्य रात को सोते वक्त या खाली समय में कहानी सुनाया करते थे। जो कि बच्चों के लिए मनोरंजन का साधन तो होती हीं थीं साथ ही बच्चों को उनकी संस्कृति से परिचित कराने में भी इन कहानियों का महत्वपूर्ण स्थान होता था। कहानियों के संचार के माध्यम से बच्चों में एक ओर जहां सुनने समझने की क्षमता का विकास होता था।

एक पीढी से दूसरी पीढी में सांस्कृतिक संचार में भी कहानियों की काफी महत्वपूर्ण भूमिका होती थी। बच्चों में जिज्ञासा जागृत होती थी। उनका ज्ञानवर्धन भी होता था। बदलते समय के साथ टेक्नालॉजी के बढते प्रयोग जब जीवन का हर एक पहलू प्रभावित हुआ है तो ये क्षेत्र भी उससे अछूता नहीं रहा। आज बच्चों के पास मनोरंजन के नए नए साधन वीडियो गेम, गैजेटस, मोबाइल, कंप्यूटर आदि आ गए तो कहानियों की परंपरा धीरे धीरे कम होती गई। बडे बुजुर्गो द्वारा बच्चों को कहानी सुनाना कम होने के पीछे एक बहुत बडा सामाजिक परिवर्तन भी है। आज के सामाजिक ढांचे में संयुक्त परिवारों की प्रथा धीरे धीरे खत्म होती जा रही हैं जिसके कारण घर में माता पिता और बच्चे ही हैं।

उनके पास शायद उतना समय नहीं। कहानी सुनाने से बच्चों को मनोरंजन के अलावा भी और कई लाभ होते हैं। इससे बच्चों का शब्दकोश बढता है। बच्चों में जिज्ञासु प्रवृति का विकास होता है। बच्चों की एकाग्र होकर सुनने की प्रवृत्ति भी बढती है। ऐसे बच्चे कक्षा में अच्छे श्रोता होते हैं एवं कहानी न सुनने वाले बच्चों की तुलना में क्लासरूम लेक्चर को अपेक्षाकृत ज्यादा आसानी से समझ सकते हैं। प्रस्तुत शोध के माध्यम से शोधार्थी ने वर्तमान आधुनिक दौर में कहानी सुनाने की परंपरा की वास्तविक स्थिति को जानने का प्रयास किया है। लेखक रामनाथ व

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

राजेंद्र कुमार षर्मा ने अपनी पुस्तक षैक्षिक समाज षास्त्र में कहानियों को षिक्षा से जोड़ इसका प्रयोग बच्चों को विशयो को भली प्रकार व रोचक ढंग से समझाए जाने पर बल दिया है।

वे कहते हैं कि यदि कहानियों को मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत किया जाय तो इस कला के माध्यम से बच्चों को संबंधित विशयों को अच्छे तरीके से समझाया जा सकता है। चंदन देशमुख अपनी पुस्तक क्लास टॉप करने के 6 तरीकों में कहते हैं कि कहानियां किसी भी इंसान के लिए याद करने का सबसे बेहतर तरीका होता है। हमें आज भी बचपन में अपने मम्मी पापा, दादा दादी द्वारा सुनाई गई कहानियां मुंह जुबानी याद हैं क्योंकि वे मजेदार व जादुई थीं और हम उन्हें ध्यान से मन लगाकर सुनते थे। अगर हम अपनी पढ़ाइ मेंभी उसी मजेदार तरीके को शामिल कर लें तो परीक्षा शब्द भी उसी प्रकार खुशी देने वाला बन जाएगा।

वेबदुनिया डॉटकॉम पर छपे एक आर्टिकिल जानिए दादा दादी क्यों सुनाते थे कहानियां के मुताबिक कहानियों के माध्यम से बच्चों का शब्दकोश बढ़ता है साथ ही कहानियां सुनने से बच्चों की सुनने की क्षमता विकसित होती है एक रिसर्च मं पता चला है कि जब बच्चे माता के गर्भ में होते हैं तभी से वे आवाज को पहचानने लगते हैं वे आवाज के प्रति सेंसेटिव होते हें और शब्दों को आत्मसात करने लगते हैं। जिन बच्चों ने अपने बचपन में कहानियां सुनी होंती हैं उनमें अपने आप ही सुनने का कौशल पेदा हो जाता है और ये उनके व्यवहार में साफ दिखता है। विशेश रूप मे अपनी कक्षा में वे अच्छे श्रोता कहलाते हैं क्योंकि एक बार कही बात उन्हें याद रह जाती है। इसमें कहानियों को सुनने की आदत का बहुत बड़ा योगदान है।

शोध के उद्देश्य एवं महत्वः

1. परिजनों द्वारा बच्चों मे कहानी सुनाए जाने की प्रवृत्ति का अध्ययन
2. बच्चों में कहानी सुनने की प्रवृत्ति का अध्ययन।
3. वर्तमान समय में कहानियों की प्रासंगिकता को जानना
4. ग्रामीण व षहरी क्षेत्रों में कहानी सुनाए जाने की स्थिति को जानना।
5. कहानी सुनने व सुनाए जाने को प्रभावित करने वाले कारकों का पता लगाना।

उपकल्पनाः

आज के सामाजिक परिदृश्य में कहानी सुनाने की परंपरा धीरे धीरे कम होती जा रही है। कहानी सुनने से बच्चों का जीवन के कई महत्वपूर्ण सबक सीखने को मिलते हों जो उन्हे आज के तकनीकि मनोरंजन के साधनों में नहीं मिलते। बच्चों का शब्दकोश बढाने में ही कहानियों की महत्वपूर्ण भूमिका है। कहानी सुनाने से बच्चे अपने कल्चर से जुडे रहते हैं। बच्चों को अपने देश की एतिहासिकता व पौराणिकता की जानकारी जितने सही और प्रभावी तरीके से कहानियों के माध्यम से दी जा सकती है किसी अन्य तकनीकि साधन से नहीं। कहानियां इंटरेक्टिव होती है जो बच्चों की जिज्ञासु प्रवृत्ति को बढाने में सहायक होती हैं।

- वर्तमान परिदृश्य में कहानी सुनाने की परंपरा कम होती जा रही है।
- शहरी क्षेत्रों में इसका चलन काफी कम हो गया है। ग्रामीण क्षेत्रों में अब भी कहीं कहीं बाकी है।
- घर के बडों के माध्यम से कहानी सुनने वाले बच्चों व कहानी न सुनने वाले बच्चों के अपने देश की संस्कृति व
- ऐतिहासिक सामान्य ज्ञान की जानकारी में काफी अंतर है। ये कहानी सुनने वाले बच्चों में कहानी न सुनने वाले बच्चों की तुलना में अपेक्षाकृत ज्यादा है।
- कहानी सुनाने की प्रवृत्ति कम होने के पीछे कारण बच्चों पर नए तकनीकि मनोरंजन के साधनों व बदलता सामाजिक पारिवारिक परिदृश्य है।

शोध प्रविधि

द्वितीयक आंकड़े

विशेषज्ञों द्वारा लिखे गए लेख, पुस्तकें व पहले हो चुके विषय से संबंधित शोध कार्य

प्राथमिक आंकडे

शोध के दौरान बच्चों, बडों व परिवारों से अनूसूची व साक्षात्कार के माध्यम से आंकडों को संगृहीत किए गए।

निदर्शन पद्धति

शोध के लिए उत्तरदाताओं के रूप में कुल 60 उत्तरदाताओं का चयन दैव निदर्शन के माध्यम से किया गया। जिसमें कुल 20 बच्चे, 20 माता–पिता व 20 बुजुर्ग दादा दादी व नाना नानी शामिल थे। इसके अलावा विशय विशेशज्ञ के रूप में के साक्षात्कार भी किए गए इनका चयन के लिए विशय से संबंधित क्षेत्र में इनकी विशेशज्ञता के आधार पर इनका चयन किया गया।

निदर्शन आकार

20–20 के तीन समूहों में कुल 60 लोगों से का साक्षात्कार व अनुसूची के माध्यम से षोध के लिए जानकारी एकत्र की गई जिसमें 20 बच्चे, 20 बुजुर्ग व 20 माता पिता शामिल थे। अनूसूची के लिए मिश्रित प्रश्नावली का प्रयोग किया गया। माता पिता से कुल 8 वस्तुनिश्ठ व 3 विस्तृत प्रश्न पूछे गए वहीं बुजुर्गों से 7 वस्तुनिश्ठ व 3 विस्तृत प्रश्न पूछे गए इसके अलावा बच्चों से 5 वस्तुनिश्ठ व 3 विस्तृत प्रश्न पूछे गए।

अध्ययन का क्षेत्र व शोध सीमाएंः

छत्तीसगढ़ राज्य की बड़े स्वरूप व शोध के लिए दिए गए समय को ध्यान में रखकर रायपुर ग्रामीण व शहरी क्षेत्र का चयन किया गया। जहां निवासरत कुल 60 लोगों से अनूसूची के माध्यम से शोध संबंधित प्रष्नों के उत्तर प्राप्त किए गए। इन 60 लोगो कों 20–20 के तीन समूहों में बांटा गया जिसमें 7 से 15 साल की आयु के 20 बच्चे

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

इसके अलावा 20 माता पिता व, 20 बुजुर्ग दादा दादी, नाना नानी शामिल है। प्रत्येक समूह में 10 उत्तरदाता ग्रामीण क्षेत्र व 10 उत्तरदाता शहरी क्षेत्र के शामिल किए गए। शोध के लिए छत्तीसगढ के शहरी क्षेत्र के रूप में रायपुर शहर व छत्तीसगढ के ग्रामीण क्षेत्र के रूप में पाटन जिला दुर्ग को शामिल किया गया।

निष्कर्ष एवं सुझाव

उपयुक्त शोध व उत्तरदाताओं से प्राप्त जानकारी से भरी गई अनुसूची के माध्यम से षोधार्थी इस निम्न निश्कर्शों पर पहुंचा कि वर्तमान समय में घरों में बच्चों को कहानी सुनाने की परंपरा खत्म होती जा रही है, इसका कारण चाहे आजकल के माता पिता के पास समय का न होना हो, षहरों में बढते एकल परिवार या फिर आज कल के बच्चों का तकनीकि मनोरंजन के साधनों की ओर बढ़ता रूझान हो। सभी परिस्थितियों का असर इस परंपरा पर पड़ा है। पहले देश के कई हिस्सों में बडे बुजुर्ग नियमित रूप से शाम को या रात को मोहल्ले या गांव में किसी निषचित स्थान पर आस पास के बच्चों को किस्से कहानियां सुनाया करते थे। पर आज ऐसी स्थिति कदाचित ही किसी ग्रामीण अंचल में भी देखने को मिलती है।

शहरी व ग्रामीण क्षेत्रों के माता पिता

शहरी क्षेत्र के 30 प्रतिषत माता पिता ने अपने बच्चों को नियमित रूप से कहानियां सुनाने व 30 प्रतिषत ने कभी कभी समय मिलने पर बच्चों को कहानी सुनाने की बात स्वीकार की। 40 प्रतिषत षहरी क्षेत्र के माता पिता ने बच्चों को कभी कहानी न सुनाने व ग्रामीण क्षेत्र के 60 प्रतिषत माता पिता ने बच्चों को अक्सर कहानी सुनाने व 40 प्रतिषत माता पिता ने कभी कभी कहानी सुनाने की बात स्वीकार की। 80 प्रतिषत षहरी माता पिता कहानी सुनाने की परंपरा कम होने के पीछे आज के समय में बढ़ते एकल परिवारों को जिम्मेदार मानते हैं। वहीं 90 प्रतिषत षहरी माता पिता एकल परिवारों के लगातार कम होने को इसका कारण मानते हैं। 90 प्रतिषत षहरी माता पिता मानते हैं कि कहानी सुनाने से बच्चों की एकाग्रता व सोचने समझने की षक्ति का विकास होता है। वहीं षत प्रतिषत ग्रामीण माता पिता भी इस बात से सहमत हैं। 20 प्रतिषत षहरी माता पिता कार्टून को कहानियों की तुलना में श्रेश्ठ मानते हैं वहीं 80 प्रतिषत कहानियों को कार्टून से अच्छा मानते हैं, लेकिन ग्रामीण इलाकों में स्थिति ठीक इसके उलट है सभी ग्रमीण माता पिता कहानियों को ही अच्छा मानते हैं न कि कार्टून को

दादा दादी व नाना नानी

1. 40 प्रतिशतत बड़े बुजुर्गो ने बच्चों को नियमित रूप से कहानी सुनाने की बात स्वीकार की वहीं 40 प्रतिषत ने इसे कभी कभी करने की बात की 20 प्रतिषत शहरी बडे बुजुर्गो ने कहा कि वे बच्चों को कभी कहानी नहीं सुनाते। ग्रामीण इलाकों के 70 प्रतिषत दादा दादी ने अक्सर व नियमित रूप से कहानी सुनाने की बात स्वीकार की वहीं 30 प्रतिषत ने कभी कभी समय व सुविधानुसार कहानी सुनाने की बात स्वीकार की

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

2.शहरी व ग्रामीण दोनों ही क्षेत्रों के 90 प्रतिषत बुजुर्गो ने अपने स्वयं के बच्चों को बचपन में कहानी सुनाने की बात स्वीकार की। वहीं 10 प्रतिषत षहरी व ग्रामीण दादी ने कभी कभी कहानी सुनाने की बात स्वीकार की है।

3.शत प्रतिशत शहरी बुजुर्गो का मानना है कि कहानियां सुनाने से बच्चों को फायदा होता है। वहीं गांवो के 90 प्रतिषत बुजुर्गो का मानना है कि कहानियां सुनाने से बच्चों को फायदा होता है। 100 प्रतिषत बुजुर्गों का मानना है कि कहानी सुनाने की परंपरा धीरे धीरे खत्म होती जा रही है। ग्रामीण क्षेत्रों में ये आंकडा 90 प्रतिषत का है।

4.शहरी व ग्रामीण दोनो ही क्षेत्रों के 100 प्रतिषत बुजुर्गो का मानना है कि षहरी व ग्रामीण बच्चों की तुलना में षहरी क्षेत्रों के बच्चे कहानियां सुनने से ज्यादा दूर होते जा रहे हैं। 100 प्रतिषत षहरी बुजुर्गो ने कहानी सुनाने की परंपरा के खत्म होने के पीछे लगातार बढ रहे एकल परिवारों को जिम्मेदार माना है वहीं गांवो में ये आकंड़ा 70 प्रतिषत का है। गावों के 30 प्रतिशत बुजुर्ग इस बात से सहमत नहीं है कि एकल परिवारों के कारण ये परंपरा खत्म हो रही है।

शहरी व ग्रामीण क्षेत्रों के बच्चे

1. 50 प्रतिशत शहरी बच्चों ने नियमित रूप से व 20 प्रतिषत ने कभी कभी माता पिता या दादा दादी से कहानियां सुनने की बात स्वीकार की। ग्रामीण क्षेत्रों में 30 प्रतिषत बच्चों ने नियमित रूप से व 60 प्रतिषत ने कभी कभी कहानी सुनने की बात स्वीकार की। वहीं दोनों ही इलाकों के 10 प्रतिषत बच्चों ने कहा कि वे कभी कहानी नहीं सुनते।
2. 50 प्रतिशत शहरी बच्चों ने कहा कि उन्हें कहानी सुनना अच्छा लगता है वहीं 20 प्रतिषत ने कहा कि नहीं। 30 प्रतिषत षहरी बच्चों ने कभी–कभी कहानी सुनना सुनने की बात स्वीकार की। ग्रामीण क्षेत्रों के 70 प्रतिषत बच्चों ने कहानी सुनना अच्छा लगने की बात स्वीकार की वहीं 20 प्रतिषत ने कभी कभी कहानी सुनने की बात की गांवो के 10 प्रतिषत बच्चों ने कहा कि उन्हे कहानियां अच्छी नहीं लगतीं।
3. 20 प्रतिशत शहरी बच्चों का मानना है कि उन्हें स्कूलों में कहानियां सुनाई जाती थीं या सुनाई जाती हैं। वहीं 80 प्रतिषत ने इससे इंकार किया। ग्रामीण क्षेत्रों में 80 प्रतिषत बच्चो ने स्कूल में कहानियां सुनाए जाने की बात स्वीकार की व 20 प्रतिषत ने इससे इंकार किया।
4. 40 प्रतिशत शहरी बच्चों ने कहानी को व 60 प्रतिषत शहरी बच्चों ने कार्टून को प्राथमिकता दी। वहीं गावों में ये आंकड़ा 50– 50 प्रतिशत का था।

सुझाव

शोध द्वारा प्राप्त आंकडों के विश्लेशण व विशेशज्ञों के साक्षात्कार के बाद प्राप्त निश्कर्शों के आधार पर शोधार्थी निम्न सुझाव प्रस्तुत करता है।

1. घरों में माता पिता को बच्चों को नियमित रूप से कहानी सुनाने का समय निकालना चाहिए

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

2. बच्चें को सुनाई गई कहानियों से अगले दिन प्रश्न पूछने चाहिए इससे उनमें सुनने के बाद याद रखने की प्रवृत्ति विकसित होगी
3. बच्चों को उनके स्कूली पाठयक्रमों में शामिल पाठों को कहानियों के माध्यम से कंटस्थ करवाया जाय तो वे जल्दी ग्रहण करेंगे तथा लंबे समय तक याद रखेंगे।
4. शोध के आधार पर ये निकल कर आया है कि शहरी क्षेत्रों के बच्चे ग्रामीण बच्चों की तुलना में अपने बुजुर्गो का सानिध्य कम पाते हैं अतः माता पिता को ये प्रयत्न करना चाहिए कि उनके बच्चों को यदि संभव हो तो हपते में एक बार तो बड़े बुजुर्गों का सानिध्य प्रदान करें ताकि वे उनके अनुभवों से अच्छी बाते सीख सकें।

संदर्भ ग्रंथः

1. अज्ञेय, कवि का कर्म संकट, दिल्ली, किताबघर प्रकाशन, 2009
2. भगवत शरण सिंह, मानव और मषीन, दिल्ली, आत्माराम एंड संस, 1987
3. श्रमेश उपाध्याय, जनवादी कहानी पृश्ठभूमि से पुर्नविचार तक, दिल्ली, वाणी प्रकाशन, 2000
4. रामनाथ षर्मा तथा राजेंद्र कुमार शर्मा, षैक्षिक समाज शास्त्र, दिल्ली, 2009
5. चंदन देशमुख, क्लास टॉप करने के 6 तरीके, नई दिल्ली, वेस्टलैंड लिमिटेड, 2014
6. कुबेर, छत्तीसगढ़ी कथा–कंथली, रायपुर, वैभव प्रकाषन, 2013
7. **Indian folk tales: http://www-culturalindia-net/ indian&folktales/** डॉ रामचंद तिवारी
8. **http://www-ignca.nic.in** डॉ मृणालिका ओझा इंटरव्यू

Vol. II, Issue XIV – June 2016
Article ID # 1004
Peer–Review Refereed Research Journal
ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

रामचरितमानस में कर्मयोग का स्वरूप

जय प्रकाश, एम.फिल(योग विज्ञान)
ब.उ.वि.वि.भोपाल(म.प्र.)

प्रस्तावनाः– अद्वितीय ग्रन्थों में श्रीरामचरितमानस उपर्युक्त स्थान पर सुषोभित होता है। यह ग्रन्थ भगवान् षिव की प्रेरणा से लिखा गया। यह ग्रन्थ भक्ति प्रधान है। इसके अतिरिक्त इसमें ज्ञानयोग, कर्मयोग का भी वर्णन है परन्तु विषेषतः यदि हम कर्मयोग की बात करें तो इस ग्रन्थ में प्रत्येक चरित्र कर्मयोग की प्रतिमूर्ति हैं। यद्यपि भक्ति के बिना कर्म और ज्ञान दोनों नीरस हैं। अतः अपने कर्तव्य को निष्काम भाव से करते हुए उस परमात्मा को भजना ही श्रीरामचरितमानस का कर्मयोग है।

विषय–प्रवेषः– भगवान् श्रीराम को मर्यादा पुरूषोत्तम् कहा जाता है। अर्थात् उन्होनें समस्त संसार के सामने शास्त्र निहित कर्तव्य कर्मों द्वारा समस्त संसार के लिए एक आदर्ष चरित्र निभाया। उन्होनें माता–पिता की आज्ञाका पालन करने के लिए 14 वर्षों तक वनवास किया। अपने माता–पिता व सम्बन्धियों सभी को संतुष्ट किया। वे एक अच्छे प्रजा–पालक, पति, स्वामी, सखा, सेवक, षिष्य, गुरू व भवसागर के तारणहार के रूप में प्रस्तुत हुए। इसी तरह रामचरितमानस में सभी पात्रों ने अपने–अपने वर्ण–आश्रम धर्मों का निष्काम भाव से पालन किया इसीलिए वे सभी मानव समाज के लिए आदर्ष रूप से सदा विद्यमान हैं और सदा ही रहेंगे।

कर्मयोग का स्वरूपः–भगवान् श्रीराम के जीवन पर विहंगम दृष्टि डालें तो हमें उनमें कहीं भी अपूर्णता दृष्टिगोचर नहीं होती। जिस समय जैसा कार्य करना चाहिए, भगवान् श्रीराम ने उस समय वैसा ही कार्य किया। राम रीति, नीति, प्रीति तथा भीति सभी जानते थे। उन्होंने नियम व त्याग का एक आदर्ष स्थापित किया। श्रीराम ने ईष्वर होकर मानवरूप रखकर मानव जाति को मानवता का पाठ पढ़ाया और मानवता का उत्कृष्ट आदर्ष स्थापित किया। कर्मयोग में सभी कार्यों को करते हुए उस कर्म की तथा फल की आसक्ति का त्याग करना होता है तथा समस्त कर्म परोपकार के लिए किए जाते है। वास्तव में कर्मयोग का आचरण कैसे किया जाता है, उस सम्बन्ध में भगवान् श्रीराम एक आदर्ष हैं। मायातीत महेष होकर उन्होंने माया का आश्रय लेकर मानव लीलाएँ की। यह लीलाएँ उन्होंने केवल धर्म की स्थापना के लिए की।

धर्म क्या है? जिसके अधीन होकर प्राणी अपने कर्तव्य कुषलतापूर्वक, उत्तमतापूर्वक पालनकर सकें। अपनी असीमित विषय वासनाओं को सीमित करके निर्विषय बन सके। भगवान् का अवतार साधन सिखाने के निमित्त हुआ, क्योंकि मनुष्य साधक है। धर्म साध्य नहीं साधन है। धर्म की जानकारी हमें शास्त्रों से प्राप्त

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

होती है और शास्त्रों से ही कर्तव्य व अकर्तव्य कर्मो की भी जानकारी प्राप्त होती है। कर्तव्य और अकर्तव्य की व्यवस्था में शास्त्र ही प्रमाण है। अतः शास्त्र विधि से नियत कर्म ही करने योग्य हैं।[1] कर्म मात्र दोषमय, अपूर्ण और बन्धन के हेतु हैं। इसीलिए निष्कर्म्य–स्थिति को सर्वश्रेष्ठ कहा है। निष्कर्म्य–स्थिति कर्म करके ही प्राप्त की जा सकती है। अतः धर्म पूर्वक कर्म करना उत्तम साधन है। इन्द्रियों के अनुकूल विषयों के भोगने में स्वाभविक प्रवृत्ति हैं। इन्द्रियाँ अतृप्त, इतनी भूखी हैं कि विषयों को भोगते–भोगते तृप्त नहीं होती। उनको नियम में रखना यही धर्म का कार्य है।

मुनि विष्वामित्र के यज्ञ की रक्षा भगवान् श्रीराम ने तत्परता से की तथा राक्षसों के भय से उन्हें निर्भय किया।[2] जब हम उनकी झाँकी श्रीरामचरितमानस में पाते है तो उनकी वीरता, धीरता एवं कार्य–तत्परता की ओर ध्यान बरबस आकृष्ट हो जाता है और उन्हें धर्म के परम् आदर्ष के रूप में पाते हैं। वन में भगवान् ने मुनियों को निर्भय करके उनके यज्ञ की रक्षा की तथा मारीच आदि राक्षसों को मार गिराया। भगवान् राम जहाँ–जहाँ भी गये तथा जो–जो क्रियाकलाप किया हैं। उनमें कर्तव्य अकर्तव्य का ध्यान रखकर सभी को आनन्दित करते हैं।[3] भगवान् श्रीराम सर्वाधार होकर भी जिस प्रकार श्रद्धा, निष्ठा एवं भक्ति से वे गुरूजी की सेवा करते थे। वह एक कर्तव्यनिष्ठा का आदर्ष है। संध्या के समय संध्यावन्दन और वेद, पुराण इतिहास की चर्चा उनका दैनिक कार्यक्रम था।

संध्या काल होते ही संध्यावन्दन के पष्चात् दोनों भाई राम–लक्ष्मण मुनि के चरण दबाने लग जाते हैं। जिनके चरण कमलों के दर्षन व स्पर्ष के लिए वैराग्यवान् पुरूष भी भाँति–भाँति के जप और योग करते हैं।[4] वे ही दोनों भाई जो साक्षात् परम ब्रह्म है। मानो प्रेम से जीते हुए प्रेमपूर्वक गुरूजी के चरण कमलों को दबा रहे हैं।[5] इस प्रकार की लीला भगवान् ने षिक्षा के लिए की अर्थात् कर्मयोग व कर्तव्य परायणता का आदर्ष स्थापित करने के लिए की।

वनवास के प्रकरण में जब उन्हें ज्ञान हुआ तो उन्हें तनिक भी दुःख विषाद नहीं हुआ। इसके विपरीत उन्हें ये दुःख अवष्य सता रहा था कि जब सभी भाई समान है तो राज्याभिषेक केवल मेरा ही क्यों।[6] तुलसीदास जी कहते हैं कि श्रीरामजी का यह सुन्दर प्रेमपूर्ण पछतावा भक्तों के मन की कुटिलता को हरण करे। भगवान् श्रीरामचन्द्र जी ने अनेकों लीलाएँ की परन्तु लोकमर्यादा को नहीं छोड़ा। वे अपने कर्मों द्वारा सभी को सुख देने का प्रयत्न करते हैं। चित्रकूट के वास के समय भगवान् श्रीराम की दिनचर्या में ऋषि–मुनियों के साथ धर्म–चर्चा एवं सत्संग का कार्यक्रम रहता था। पत्नी और भ्राता को भी सुख की चेष्टा करते थे।[7]

श्रीरामचन्द्रजी ने कर्मयोग अर्थात् निष्काम भाव से परहित में कार्य किया उन्होनें परहित को उत्तम धर्म कहा तथा परनिन्दा को महान् पाप।[8]परन्तु फिर भी कर्म की गति बहुत कठिन है। कौन सा कर्म कर्तव्यकर्म है? और कौन सा अकर्तव्य? यह निष्चित करना कठिन कार्य है। कर्म, अकर्म और विकर्म का यथार्थ ज्ञान पाना

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

कठिन है। कोई सिद्ध मुनि ही कर्म की गति को पा सकता है अतः कर्मयोग को भी इस कलिकाल में कठिन बताया गया है। निष्काम भाव की प्राप्ति होना अन्यन्त कठिन है।

समीक्षा :– करइ जो करम पाव फल सोई। नियम नीति असि कह सबु कोई।।

रा.च.म. 2/77/4

अर्थात् जो कर्म करता है वही फल पाता है। ऐसा वेद की नीति कहती है ऐसा सब कोई कहते हैं। आगे भक्ति योग की चर्चा करते हुए गोस्वामी तुलसीदास जी के माध्यम से श्रीराम कहते हैं

संदर्भ ग्रन्थ

1. तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ।
ज्ञात्वा शास्त्र विधानोक्तं कर्म कर्तुमिहार्हसि।।

श्रीमद् भगवद्गीता 16/14

2. प्रात कहा मुनि सत रघुराई। निर्भय जग्य करहु तुम्ह जाई।।
होम करन लागे मुनि झारी। आपु रहे मख की रखवारी।।

रा.च.मा. 1/210/1

3. पावक सर सुबाहु पुनि मारा। अनुज निसाचर कटुक सँघारा।।
मारि असुर द्विज निर्भयकारी। अस्तुति करहिं देव मुनि झारी।।

रा.च.मा. 1/210/3

4. मुनिबर सयन कीन्हि तब जाई। लगे चरन चापन दोउ भाई।।
जिन्ह के चस सरोरूह लागी। करत बिबिध जप जोग बिरागी।।

रा.च.मा. 1/226/2

5. तेइ दोउ बंधु प्रेम जनु जीते। गुर पद कमल पलोटत प्रीते।।
बार–बार मुनि अग्या दीन्हीं। रघुबर जाइ सयन तब कीन्ही।

रा.च.मा. 1/226/3

6. बिगल बंस यहु अनुचित एक। बंधु बिहाइ बड़ेहि अभिषेकू।।
प्रभु सप्रेम पछितानि सुहाई। हरउ भगत मन कै कुटिलाई।।

रा.च.मा. 2/10/4

7. सीय लखन जोहि बिधि सुखुलहहीं। सोई रघुनाथ करहिं सोइ कहहिं।।
कहहिं पुरातन कथा कहानी। सुनहिं लखनु सिय अति सुखु मानी।।

रा.च.मा. 2/141/1

8. परम धर्म श्रुति बिदित अहिंसा। पर निदा सम अघ न गरीसा।।

रा.च.मा. 7/121/11

9. नहीं कलि करम न भगति बिबेकू। राम नाम अवलम्बन एकू।।

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

कालनेमि कलि कपट निधानू। राम सुमति समरथ हनूमानू।।

रा.च.मा. 7 / 27 / 4

1. प्रसाद ज्वाला श्री जी, श्री रामचरित मानस रामायण, श्री ठाकुर प्रसार पुस्तक भंड वाराणसी, 1990
2. ब्रम्हवर्चस, रामायण की प्रगतषील प्रेरणाएँ, अखण्ड ज्योति संस्थान मथुरा, 1998
3. शर्मा जानकीनाथ, श्री मद्वाल्मीकी रामायण (द्वितीय खण्ड), गीता प्रेस गोरखपुर, 2001
4. दास वै॰ श्री जयराम, मानस रहस्य, गीता प्रेस गोरखपुर, 2002
5. शंकरानन्द स्वामी, श्री रामचरित मानस, सेंट्रल चिन्मय मिषन ट्रस्ट मुंबई, 2008
6. शर्मा जानकीनाथ, श्री मद्वाल्मीकी रामायण (प्रथम खण्ड), गीता प्रेस गोरखपुर, 2010
7. पोद्दार हनुमान प्रसाद गोस्वामी चिम्मन लाल शास्त्री एम॰ए॰ अग्रवाल केषोराम, वाल्मीकीय रामायण, गीता प्रेस गोरखपुर, 2010
8. त्रिपाठी श्री कृष्णमणि डा॰, महाकवि कालीदास विरचिंत रघुवषंम् महाकाव्य, चौखम्भा सुरभारती प्रकाषन वाराणसी, 2012

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

Vol. II, Issue XIV – June 2016
Article ID # 1005
Peer–Review Refereed Research Journal
ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

अंधविश्वास उन्मूलन में मीडिया की भूमिका
(ग्रामीण छत्तीसगढ़ में देखे जानेवाले टेलीविजन धारावाहिकों के विशेष संदर्भ में)

राजकुमार दास, एम.फिल. रिसर्च स्कॉलर
कुशाभाऊ ठाकरे पत्रकारिता एवं जनसंचार विश्वविद्यालय
रायपुर (छ.ग.)

डॉ राजेंद्र मोहंती, विभागाध्यक्ष
इलेक्ट्रानिक मीडिया विभाग
कुशाभाऊ ठाकरे पत्रकारिता एवं जनसंचार विश्वविद्यालय
रायपुर (छ.ग.)

प्रस्तावनाः मानव जाति का आदिम युग से वर्तमान तक का सफर अनेक प्रकार की भौतिक, शारीरिक, प्रकृतिक और मनोवैज्ञानिक परिवर्तनों और विकास के क्रमिक दौर से होकर गुजरा है, जिसमें मानव ने अपने उद्‌भव से लेकर अब तक अनगिनत महत्वपूर्ण पड़ावों को पार किया है । समय के साथ उत्तरोत्तर प्रगति करते मनुष्य ने अपने हजारों वर्षों के इतिहास में सभ्यताओं, संस्कृतियों, धर्म, आस्था और ज्ञान की अनेक परिभाषाएँ गढ़ीं और अपने सामने घटने वाली प्रत्यक घटना के लिए तर्कों का प्रयोग करना शुरू किया, परंतु जब–जब वह किसी प्रकृतिक घटना अथवा संयोग की तर्कपूर्ण व्याख्या करने में असमर्थ हो जाता था तब उसे वह यूं हो स्वीकार करता हुआ चला जाता था।

समय बदला और ज्ञान–विज्ञान की शाखाओं के प्रादुर्भाव के पश्चात इन घटनाओं के तर्कों पर गहन अध्ययन का दौर शुरू हो गया, पर आज के आधुनिक युग में विज्ञान और तकनीकी के इतने आगे निकल जाने के बावजूद देश और दुनिया में ऐसे अनगिनत लोग हैं जो तरह–तरह के अंधविश्वास और रूढ़ियों को मानते हैं और उन पर विश्वास भी करते हैं। संचार साधनों की खोज और प्रगति के फलस्वरूप भारत में टेलीविजन के आगमन से संचार क क्षेत्र में अभूतपूर्व क्रांति आई, परंतु विकास के उद्देश्य से स्थापित किया गया टेलीविजन माध्यम आगे चलकर जब निजी हाथों में आया तो सार्थक कार्यक्रमों के अभाव ने टेलीविजन का मूलभूत रूप ही बदल

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

दिया, मनोरंजन के नाम पर परोसे जाने वाले कार्यक्रमों ने धीरे–धीरे भारतीय समाज में चमत्कार और अंधविश्वास के नए मूल्य स्थापित किए और इस प्रकार खेल शुरू हो गया टेलीविजन पर अंधविश्वास के अंतहीन प्रचार का।

वर्तमान समय में जबकि साइंटिफिक टैम्पर भारतीय जनमानस के जीवन के हर क्षेत्र में झलक रहा है टेलीविजन माध्यमों ने धन और टीआरपी कि होड में अपने स्तरहीन धारावाहिकों के प्रसारण से अंधविश्वास को समूल नष्ट करने कि बजाय उसे जीवित करने और उसका प्रचार करने का कार्य अपेक्षाकृत अधिक किया है । निश्चित शोध पद्धतियों और उपकरणों कि सहायता व सुव्यवस्थित अध्ययन के पश्चात ही यह कहा जा सकेगा कि क्या वास्तव में ग्रामीण परिवेश में भारतीय टेलीविजन धारावाहिक अंधविश्वास को बढ़ा रहे हैं अथवा उन्हें कम करने में अपनी भूमिका निभा रहे हैं। प्रस्तुत शोध प्रबंध समाज और मोडिया तंत्र दोनों के लिए उपयोगी सिद्ध है।

शोध का उद्देश्यः

शोध के उद्देश्य निम्नलिखित शोध प्रश्नों में निहित है –

क्या ग्रामीण क्षेत्रों के लोग अंधविश्वासों को मानते हैं !

क्या ग्रामीण टीवी का उपयोग केवल मनोरंजन हेतु करते हैं !

क्या उस क्षेत्र विशेष के टीवो चौनलों में अंधविश्वास उन्मूलन हेतु कार्यक्रम आते हैं या नहीं !

क्या ग्रामीण अंधविश्वास उन्मूलन के कार्यक्रम देखकर उसे जीवन में लागू करते हैं

क्या टेलीविजन धारावाहिक अंधविश्वास को कम (उन्मूलन) कर रहे हैं ?

शोध का महत्वः

प्रस्तुत शोध का महत्व अग्रलिखित बिन्दुओं में निहित हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों में लोगों द्वारा माने जा रहे अंधविश्वासों का पता लग सकेगा।

धारावाहिकों द्वारा अंधविश्वास उन्मूलन के क्षेत्र में किए जा रहे प्रयास और उसके प्रभावों का आकलन किया जा सकेगा ।

धारावाहिकों द्वारा फैलाए जा रहे अंधविश्वासों के बारे में पता लग सकेगा।

ग्रामीणों की मान्यताओं में वैज्ञानिक दृष्टिकोण को कैसे सम्मिलित किया जाए और उन्हें कैसे जागरूक किया जाए इस संबंध में नई दिशा मिल सकेगी।

उपकल्पना : प्रस्तावित अध्ययन के लिए निम्नलिखित उपकल्पनाओं को आधार माना गया।

1. ग्रामीण क्षेत्रों के लोग आज भी अंधविश्वासों को मानते हैं।

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

2. लोग टेलीविजन धारावाहिक केवल मनोरंजन हेतु देखते हैं।

3. ग्रामीण जन अंधविश्वास उन्मूलन से संबन्धित कार्यक्रम देखते हैं पर उसे लागू नहीं करते।

4. टेलीविजन धारावाहिकों में अंधविश्वास उन्मूलन की अपेक्षा अंधविश्वास को बढ़ावा देने वाले कार्यक्रम अधिक देखे जाते हैं ।

5. टेलीविजन में आने वाले धारावाहिक अंधविश्वास को बढ़ाते हैं।

आंकड़ों का संकलनः द्वितीयक आंकड़े

प्रस्तुत अध्ययन में वर्णित सैध्दांतिक अध्यायों के लिए साहित्य अवलोकन खंड में वर्णित विभिन्न पुस्तकों, शोध–ग्रंथों, समाचार पत्र–पत्रिकाओं,टेलिविजन कार्यक्रमों,शोध–पत्रिकाआं एवं इन्टरनेट आधारित लेखों सामग्रियों का द्वितीयक आंकड़ों के रूप में प्रयोग किया गया।

प्राथमिक आंकड़ेः अध्ययन का मुख्य भाग प्राथमिक आंकड़ों से प्राप्त तथ्यों पर आधारित है। उक्त प्राथमिक आंकड़े प्रतिनिधि टेलिविजन कार्यक्रमों के अंतर्वस्तु विश्लेषण, शोध क्षेत्र से अनुसूची के द्वारा प्राप्त उत्तरों और विषय–विशेषज्ञों के साक्षात्कार से प्राप्त तथ्यों में निहित हैं। साथ ही लागत, ऊर्जा और समय की अनुकूलता को ध्यान में रखते हुए शोधार्थी ने कुशाभाऊ ठाकरे पत्रकारिता एवं जनसंचार विश्वविद्यालय के निकट स्थित 5 गावों (काठाडीह, कांदुल, रवेली, दतरेंगा, खुडमुड़ा) के 20–20 व्यक्तियों से उत्तर प्राप्त किया गया है।

निदर्शन हेतु सरल यदृच्छ प्रतिदर्शन पद्धति से लोगों को चुना गया, इसके अंतगत विभिन्न आयु, वर्ग की महिलाओं एवं पुरुषों के घर पर उपस्थिती के आधार पर उत्तर देने हेतु चयनित किया गया। साथ ही प्रत्येक ग्राम से एक मितनिन (आशा), एक शिक्षक एवं सरपंच के घर से (उद्देश्यपूर्ण प्रतिदर्श के रूप में) निश्चित रूप से व अन्य लोगों से चयनात्मक निदर्शन पद्धति से अनूसूची भरवाई गई ।प्रस्तावित विषय के अध्ययन हेतु उपरोक्त वर्णित क्षेत्रों में निदर्शन आधारित उत्तरदाताओं से उत्तर प्राप्त करने के लिए अनुसूची उपकरण के द्वारा ग्रामीणों से आंकड़ोंध्तथ्यों की प्राप्ति की गई, साथ ही टेलिविजन कार्यक्रमों के विशेष सन्दर्भ में होने के कारण कुछ प्रतिनिधि कार्यक्रमों का अंतर्वस्तु विश्लेषण किया गया एवं अन्धविश्वास उन्मूलन के क्षेत्र में कार्य कर रहे विषय विशेषज्ञों से साक्षात्कार पद्धति के द्वारा उनके अभिमत प्राप्त किए गए।

अंधविश्वास और उसके आयामः "प्राचीन मिथकों और मान्यताओं पर बिना वैज्ञानिक या सामाजिक परिप्रेक्ष्य में विश्लेषण किए आँख मूंदकर विश्वास कर लेना ही अन्धविश्वास है" या दुसरे शब्दों में कहें तो "जिन मान्यताओं या बातों का कोई तार्किक परिक्षण ना हुआ हो उन पर आँख मूंदकर भरोसा कर लेना अंधविश्वास है"। बिना सोचे समझे किया जाने वाला विश्वास अथवा स्थिर किया

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

हुआ मत अंधविश्वास है। किन्हीं परंपरागत रूढ़ियों, विशिष्ट धर्माचार्यों के उपदेशों या किसी राजनीतिक सिद्धान्त के प्रति विवेकशून्य धारणा अंधविश्वास है । ऐसे सुदृढ़ विश्वास जिनका प्रत्यक्ष अनुभव द्वारा समर्थित होना या न होना व्यर्थ रहता है, अंधविश्वास है । अज्ञानजनित अविवेकपूर्ण भाय तथा परलौकिक शक्तियों को भोलेपन के साथ स्वीकार करना अंधविश्वास है । इसी प्रकार विज्ञान की कसौटी पर खरी न उतरती अस्थाएं अंधविश्वास हैं ।

"ब्रॉडकास्ट कंटेंट कम्प्लेंट्स काउंसिल ने भी उन तमाम टीवी चानलों को एक हिदायत जारी की है, जो टीवी पर तंत्र–मंत्र, अंधविश्वास, काला जादू जैसे कार्यक्रमों का प्रसारण करते हैं। परिषद की तरफ से जारी एडवाइजरी में कहा गया है कि 'अगर कहानी के लिए ऐसा कोई चित्रण बहुत जरूरी हो जाए तो चौनल को उसके टेलीकास्ट के दौरान स्क्रॉल चलाना चाहिए कि वे इस तरह के कार्यों को स्वीकृति नहीं देता और यह सारा कुछ कल्पना पर आधारित है । बीसीसीसी चाहती है कि चौनल तंत्र–मंत्र पर आधारित कार्यक्रम का प्रसारण रात 11 बजे के बाद करें हालांकि बीसीसीसी ने यह नहीं कहा है कि ऐसे शोज का प्रसारण प्राइम टाइम के दौरान नहीं किया जाना चाहिए ।

ग्रामीण छत्तीसगढ़ और अंधविश्वासः भारतवर्ष ग्रामों का देश है । यहाँ लगभग 72 प्रतिशत लोग इस देश के 6 लाख ग्रामों में निवास करते हैं और इन ग्रामीण समाजों की सामाजिक, मनोवैज्ञानिक संरचनाओं और जीवनशैली में नगरों और महानगरां की अपेक्षा काफी अंतर मिलता है । ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा और अन्य सुविधाओं के प्रसार के अथक प्रयासों के बावजूद वहाँ की स्थितियों में पूर्ण रूप से परिवर्तन अब तक संभव नहीं हो सका है । देश के ग्रामीण एवं आदिवासी अंचलों में निरक्षरता, परंपरागत सोच आर तद्–केंद्रित जीवन दृष्टि, तर्क आधारिक मानसिकता की कमी, वैज्ञानिक सत्यता की जानकारी के अभाव में आज भी कई तरह की अवैधानिक, अमानवीय व असामाजिक अंधविश्वास प्रचलित हैं । इनमें टोनही, डायन, झाड़–फूँक की आड़ में ठगी, धन दोगूना करने की चालाकियाँ, गड़े धन निकालना, शारीरिक, मानसिक आपदाओं को हल करने के लिए गंडे, ताबीज, चमत्कारिक पत्थर एवं छद्म औषधियों का प्रयोग कर धन कमाना आदि प्रमुख हैं ।

अंर्तवस्तु विश्लेषणः प्रस्तावित अध्ययन हेतु अंधविश्वास आधारित धारावाहिकों में दिखाई जान वाली सामग्री का अध्ययन एवं विश्लेषण भी अवश्यक था अतः शोध के दौरान ग्रामीण क्षेत्रों में अनुसूची भरवाने से पूर्व अंधविश्वास फैलाने वाले दो कार्यक्रमों 'नागिन' और 'ससुराल सिमर का' का अंतर्वस्तु विश्लेषण किया गया कि इन कार्यक्रमों में किस प्रकार कि सामग्री दिखाई जाती है

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

ताकि शोध विषय कि समझ बढ़ाने तथा ग्रामीण जनता से अधिक व्यवस्थित रूप में उत्तर प्राप्त किया जा सके । इसके साथ ही अनुसूची से उत्तर प्राप्त करने के पश्चात प्राप्त उत्तरों में मिले शैक्षिक जागरूकता के दो कार्यक्रमों का बाद में अंतर्वस्तु विश्लेषण किया गया । इससे पता चला कि सामाजिक दृष्टि से देखा जाए तो नागिन जैसे कार्यक्रम समाज की वास्तविकता से कोसों दूर है ।

नागिन जैसे कार्यक्रमों से अंधविश्वास और रूढ़िवादी मूल्यों को बढ़ावा मिल रहा है और साथ ही वर्तमान समाज में किसी प्रकार की प्रासंगिकता नहीं है । इस कार्यक्रम से भले ही मनोरंजन हो जाए परंतु इससे कोई प्रासंगिक शिक्षा मिले ऐसा शायद ही संभव है ।

ससुराल सिमर का कार्यक्रम एक पारिवारिक कहानी है, इसके नियमित दर्शकों का कहना है की इस कार्यक्रम की शुरुआत वैसे नहीं हुई थी जिस रूप में यह वर्तमान में है, अर्थात शुरुआत में इस कार्यक्रम में केवल परिवार के इर्द–गिर्द ही कहानियाँ घूमती थी, किन्तु अचानक से इसमें देवीय शक्तियों, जादू, और तंत्र–मंत्र आदि का समावेश कर दिया गया इससे कार्यक्रम में कई तरह के अंधविश्वास को बढ़ावा देने वाले तत्वों का अतिरेक हो गया , इससे कार्यक्रम के सामाजिक मूल्य में निश्चित तौर पर गिरावट आई है । इस कार्यक्रम में समान्यतया घरेलू सम्बन्धों, पारिवारिक समस्याओं और परिवार पर आए दिन पड़ने वाली तांत्रिक मुसीबतों क विषय में ही दिखाया जाता है। सम्पूर्ण रूप से देखा जाए तो ससुराल सिमर का कार्यक्रम से किसी प्रकार की प्रासंगिक शिक्षा या नया ज्ञान नहीं मिलता है ।

साक्षात्कार

श्री शरद कोकास

भय और भूत–प्रेत आधारित कार्यक्रमों के उद्भव से अच्छी आत्मा और बुरी आत्मा का कॉन्सेप्ट दिखाया गया और साथ ही नागलोक पर आधारित नाग व नागिन से जुड़े कई प्रकार के धारावाहिकों का निर्माण प्रारम्भ हुआ। दरअसल टेलीविजन पर कुछ दृश्य और ध्वनि प्रभावों के द्वारा बनाए गए इन कार्यक्रमों पर भारतीय ग्रामीण जनता कहीं अधिक जल्दी और आसानी से विश्वास कर लेती है । यहीं से मीडिया की भूमिका नकारात्मक हो जाती है । मनोविज्ञान कहता है की हम अपनी इंद्रियों के द्वारा जो कुछ ग्रहण करते हैं वह हमारे अवचेतन मन में रह जाता है । लेकिन जब हम कोई देखते–सुनते हैं तो हमारा मस्तिष्क तर्क करता है । जब हम कोई स्थित चित्र या फोटोग्राफ देखते हैं तो हमारा मस्तिष्क उसके अलग–अलग आयामों के बारे में सोचता और तर्क करता हैं ,परंतु जब कोई चित्रा 1 सेकंड के 16 वें हिस्से में हमारी आँखों के सामने से

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

निकाल दिया जाता है तो उसपर हमारा मस्तिष्क तर्क नहीं कर पता और उसे जैसे का तैसा सत्य समझ कर स्वीकार कर लेता है। ठीक ऐसे ही टेलीविजन या फिल्म देखते समय जब हमारी आँखों के सामने से 25 या 30 फ्रेम प्रति सेकंड की दर से जब चलचित्र का प्रदर्शन होता है तो हमारा मस्तिष्क उसे देखकर तर्क करने की अपेक्षा उस पर यकीन करता चला जाता है ।

डॉ. दिनेश मिश्र

जिन बातों का कोई तार्किक परीक्षण ना हुआ हो और किसी प्रकार के परीक्षण के बिना भी उन रीति–रिवाज या मान्यताआं की परंपरा लंबे समय से चली आ रही हो, इन सभी पर आँख बंद कर भरोसा करना ही अंधविश्वास है । वैसे तो इनका वर्गिकरण काफी क्लिष्ट है यद्यपि, इन्हें सामाजिक अंधविश्वास, स्वास्थ्य से जुड़े अंधविश्वास, तथा भौगोलिक आदि प्रकारों में बांटा जा सकता है । आजकल टेलोविजन निर्माता और निर्देशक अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता के नाम पर कुछ भी दिखाने लगे हैं । जिन्हें देखकर कहीं न कहीं आम जनता भी प्रेरित होती है , ऐसे में अंधविश्वास को बढ़ाने वाले टोनही, बली तथा अन्य अंधश्रद्धा रूपी मान्यताओं को टीवी पर बढ़–चढ़ कर दिखाना नकारात्मक है ।

पुराने ग्रन्थों और साहित्य पर आधारित कहानियों को टीवी पर अधिक प्रभावी बनाने के लिए कुछ ऐसी चीजें बना दी जातीं हैं जिनका विज्ञान या वैज्ञानिक तर्कों से कोई वास्ता नहीं होता । हवा में उड़ना, जीभ काटना जैसी कई घटनाएँ हैं जो आज टीवी की मेहरबानी से दिखाई जाने लगीं हैं, पर ये सब विजुअल इफेक्ट्स हैं उससे ज्यादा कुछ भी नहीं । शिक्षा के निचले स्तर की वजह से या जानकारी के अभाव में लोग इन दृश्यों से प्रभावित हो जाते हैं और उन्हें सच मानने लगते हैं ।

निष्कर्षः अनुसूची से प्राप्त उत्तरों के विश्लेषण स पता चला शोधार्थी इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि सर्वाधिक 74 प्रतिशत लोग टेलीविजन का प्रमुखता से प्रयोग करते हैं इसके पश्चात 18ः लोग समाचार पत्र भी पढ़ते हैं, 5 प्रतिशत लोग मोबाइल का भी प्रयोग करते हैं तथा रेडियो का प्रयोग सबसे कम केवल 1 प्रतिशत लोग ही कर रहे हैं।सर्वाधिक ग्रामीण 1 घंटे कसमे टेलीविजन देखने के लिए देते हैं। वे धारावाहिक वाले चानल्स अधिक संख्या में देखते हैं। सर्वाधिक 52 प्रतिशत लोग दैवीय शक्तियों और मिथकों पर आधारित धारावाहिक देखते हैं जो कि मनोरंजन के नाम पर अंधविश्वास को बढावा दे रहे हैं, तथा 48 प्रतिशत लोग इस प्रकार के कार्यक्रम नहीं देखते। इसके अलावा लोगों ने "नागिन, ससुराल सिमर का, बालिका वधू, स्वरागिनी तथा विषकनया" आदि धारावाहिकों को देखने की बात स्वीकारी, तात्पर्य यह कि अंधविश्वास दिखाने

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

वाले कार्यक्रम ग्रामीणों के पसंद कि लिस्ट में भी सबसे ऊपर हैं,। इसके अलावा अन्य निष्कर्ष प्राप्त हुए जो इस प्रकार हैः–

01. ग्रामीण क्षेत्रों में टेलीविजन एक सशक्त दृश्य–श्रव्य माध्यम है, और ग्रामीण क्षेत्रों में अधिकांश लोग इसका प्रमुखता से उपयोग करते हैं . इसमें मुख्य रूप से लोग धारावाहिक, समाचार, फिल्में और ज्ञान विज्ञान के कार्यक्रम देखते हैं . पर सर्वाधिक लोग धारावाहिको को प्राथमिकता देते हैं।
02. इक्कीसवीं सदि में प्रवेश करने के बाद और ज्ञान–विज्ञान के तमाम साधनों के प्रसार के बावजूद आज भी ग्रामीण जन अंधविश्वासों में आस्था रखते हैं, परन्तु अधिकांश लोग सार्वजनिक रूप से तंत्र–मंत्र, और अन्य अंधविश्वासों को मानने की बात को अस्वीकार करते हैं।
03. टेलीविजन अपने दृश्यों को ध्वनि के साथ प्रदर्शित करने के कारण सर्वाधिक प्रचलित प्रभावशाली माध्यम है, और यह समाज की विचार प्रक्रिया, मानसिकता और लोगों के जीवन स्तर को प्रभावित करने में सक्षम है और यह अंधविश्वास जैसी कुरीतियों को समाप्त भी कर सकता है लेकिन प्रस्तुत अध्ययन के माध्यम से मिले प्रमाणों से यह कहा जा सकता है कि स्थिति इसके विपरीत है . अर्थात टेलीविजन अंधविश्वास को समाप्त करने या उसका उन्मूलन करने की बजाय उसे बढ़ावा दे रहा है .
04. अनुसूची से प्राप्त आंकड़ों के विश्लेषण से यह ज्ञातव्य है कि ग्रामीण छत्तीसगढ़ में लोग अपना अधिक समय और ध्यान अंधविश्वास बढ़ाने वाले धारावाहिकों को देते हैं, और अपेक्षाकृत अत्यल्प समय शैक्षिक व जागरूकता के कार्यक्रमों को देते हैं .
05. जादुई, मिथक तथा गल्प आधारित कार्यक्रमों को मनोरंजन के रूप में देखना उचित है परंतु उन्हें बिना तर्क के या बिना विचार किए सच मान लेना या उनमें दिखाई चीजों को जीवन में उतारना वाकई नुकसानदेह है.
06. ग्रामीण क्षेत्रों में देखे जाने वाले अधिकांश धारावाहिक अंधविश्वास का बढ़ाते हैं, वहीं गिने–चुने लोग ज्ञानवर्धक सामग्री वाले कार्यक्रम देखते हैं पर उन्हें जीवन में लागू नहीं कर पाते.

सुझावः

- टेलीविजन कार्यक्रमों को न सिर्फ अपने चमत्कार आधारित कार्यक्रमों का समय बदलना

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

चाहिए बल्कि बीसीसीसी को भी सिर्फ निर्देश जारी करने के बजाय सख्ती स इन नियमों का पालन करवाने हेतु कडा रुख अपनाना चाहिए और इस हेतु इन कार्यक्रमों के प्रसारण संबंधी कानून भी बनाए जाने चाहिए ।

- टेलीविजन निर्माताओं को अपने चमत्कारिक कार्यक्रमों के अंत में भूत व नागिन आदि का किरदार निभाने वाले कलाकारों को उनके असली रूप मं परिचित करवाकर एक सकारात्मक संदेश देना चाहिए कि यह कार्यक्रम मात्र कल्पना का कार्य है
- कार्यक्रम के अंत में या हर एड ब्रेक के समय कम से कम 30–30 सेकंड के अंधविश्वास उन्मूलन के जागरूकता के संदेश दिखाने चाहिए ।
- सरकार को इन धारावाहिकों के संबंध में ऐसा कानून बनाना चाहिए जिसके अंतर्गत , पुनर्जन्म, चमत्कार, अवास्तविक घटनाओं तथा मिथकों आदि पर आधारित धारावाहिकों को प्रसारित करने से पहले आवश्यक जांच करवाना अनिवार्य हो तथा समुचित बदलाव करने पश्चात टीवी पर प्रसारित किया जाए ।
- टीवी जैसे प्रसार माध्यम का उपयोग वैज्ञानिक साच को बढ़ाने में किया जाना चाहिए । तथा स्वास्थ्य व सामाजिक जागरूकता के विज्ञापन आने चाहिए ।
- टीवी, फिल्मों, खेल व अन्य क्षेत्रों की बड़ी हस्तियों द्वारा अंधविश्वास से जुड़ी चीजों का या अंधविश्वास फैलाने वाले संदेशों का प्रचार–प्रसार व सार्वजनिक प्रदर्शन नहीं होना चाहिए ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचीः

1. पटैरिया डॉ. मनोज, भास्कर विजय, 2007, विज्ञान संचार और राष्ट्रिय विकास, राष्ट्रिय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद विज्ञान एवं प्रोद्योगिकी विभाग, नई दिल्ली. वसंत सेवा संस्थान, लखनऊ।
2. जिंदल सुरेश कुमार , कुमार कुलदीप, विज्ञान संचार के विविध आयाम, रक्षा वैज्ञानिक सूचना तथा प्रलेखन केंद्र(डेसीडॉक), दिल्ली य रक्षा अनुसंधान तथा विकास संगठन (डी.आर.डी.ओ.), रक्षा मत्रालय, दिल्ली ।
3. मिश्र डॉ. दिनेश, 2006, चमत्कार की आशा धोखा ही धोखा, जागृति प्रकाशन, रायपुर ।
4. मिश्र डॉ. दिनेश, 2006, कोई नारी टानहो नहीं, जागृति प्रकाशन, रायपुर ।
5. रैणा गौरीशंकर, 2012, टेलीविजन रू चुनौतियाँ एवं संभावनाएं, वाणी प्रकाशन ।
6. सिंह डॉ.देवव्रत, 2007, भारतीय इलेक्ट्रानिक मीडिया, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली ।
7. आहूजा राम, 2004, सामाजिक अनुसन्धान, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर.नई दिल्ली

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

Vol. II, Issue XIV – June 2016
Article ID # 1006
Peer–Review Refereed Research Journal
ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

हठयोग का अर्थ स्वरूप एवं परंपरा

प्रो. जी.डी.शर्मा, अध्यक्ष एवं सोहन लाल, शोधार्थी
योग विभाग पतंजलि विश्वविद्यालय, हरिद्वार (उत्तराखण्ड)

साधना की दृष्टि से योग एक अनूठी जीवन कला है। इस अद्भुत कला का साक्षात्कार मानव शरीर के माध्यम से ही संभव है। मनुष्य शरीर सबसे महत्त्वपूर्ण है एवं बहुत प्रयासों के बाद मिलता है जो साधना के माध्यम से मोक्ष प्राप्ति कर सकता है। जिसके मार्ग भिन्न–भिन्न हो सकते हैं। इसमें से एक है – हठयोग।

योग शास्त्र में हठयोग का बहुत महत्त्व माना जाता है। हठयोग एक शक्तिशाली पर कठिन कष्टप्रद साधना प्रणाली है। इसकी क्रिया का सारा सिद्धांत इस तथ्य पर आधारित है कि शरीर और आत्मा में घनिष्ठ संबंध है। हठयोग मुख्यतः स्थूल शरीर एवं प्राण साधना पर आधारित है। शरीर में व्यवस्थित नाड़ियाँ प्राण तत्त्व संवाहन होती हैं। हठयोग का साक्षात् केन्द्र प्राणकोष है। यह प्राण स्पंदन के निरोध के द्वारा अन्य केन्द्रों को प्रभावित करता है। प्राणायाम का संबंध शरीर के नाड़ी–मंडल से है। इन नाड़ियों की संख्या भिन्न–भिन्न ग्रंथों में भिन्न है परंतु कुछ महत्त्वपूर्ण नाड़ियां मानी हैं इन नाड़ियों के सामंजस्य के आधार पर हठयोग शब्द का अर्थ स्पष्ट होता है। हठयोग का शारीरिक पक्ष में अर्थ बलपूर्वक शरीर में निहित उच्चत्तम शक्ति का जागरण है। आध्यात्मिक पक्ष में अर्थ है – शरीर में अवस्थित काम ऊर्जा का अध्यात्म ऊर्जा में रूपांतरण करना।

हठयोग ग्रंथों में 'हठ' शब्द का अर्थ स्पष्ट होता है कि –

ह और ठ दो भिन्न वर्ग के मिलन से हठ शब्द की व्युत्पत्ति हुई। ह से सूर्य नाड़ी का ठ से चन्द्र नाड़ी का प्रतिनिधित्व करती है। इस प्रकार सूर्य और चन्द्रनाड़ी के संयोग से ही हठ शब्द निष्पन्न होता है। सूर्य अर्थात् पिंगला नाड़ी दक्षिण, यमुना, प्राण, पित्त, रज, पवन तथा शिव का प्रतीक है जो बल, पराक्रम, शौर्य, वीर्य को धारण करती है। चन्द्र अर्थात् इड़ा नाड़ी वाम, गंगा, अपान, कफ, बिन्दु, मन तथा शक्ति का प्रतीक है जो श्रद्धा, शक्ति, धैर्य, प्रेम, सहानुभूति को धारण करती है। इन दोनों शक्तियों से शरीर की क्रियाएं निष्पन्न होती हैं और हठयोग का परम लक्ष्य इनके संयोग से ही प्राप्त होता है।[1]

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

इसी तरह ज्ञानस्वरोदय में उल्लेख है– दायें स्वर को पिंगला नाड़ी का प्रतिनिधित्व माना है अर्थात् सूर्य नाड़ी, बायें स्वर को इड़ा नाड़ी का प्रतिनिधित्व माना है अर्थात् चन्द्र नाड़ी इन दोनों का संयोग ही परम तत्व के साथ वास है।[2]

योग शिखोपनिषद् के अनुसार अपान वायु और प्राण वायु की एकता कर लेना, स्वरज रूपी महाशक्ति कुण्डलिनी का स्वरेत रूपी आत्म तत्त्व के साथ संयुक्त कर लेना, सूर्य स्वर अर्थात् पिंगला नाड़ी और चन्द्र स्वर अर्थात् इड़ा नाड़ी का संयोग करना तथा परमात्मा से जीवात्मा का मिलन योग है।[3]

ऋषियों ने ह और ठ वर्णो का अर्थ प्रत्यक्ष रूप से कहीं नहीं दिया है किंतु प्रतीकात्मक रूप से सुंदरदास जी हठयोग को परिभाषित करते हैं – सूर्य और चंद्र अर्थात् इड़ा और पिंगला नाड़ियों का संयुक्त रूप से प्रवाहित होना ही हठयोग का परम लक्ष्य है।[4]

इस हठयोग के आदि उपदेष्टा कौन थे? इसका निर्णय करना अत्यन्त कठिन है। निगम काल से ही हठयोग विद्या अप्रत्यक्ष रूप से प्रकट थी। कालान्तर में इसमें आगम का समावेश होता गया। इस तरह कई मत सम्प्रदायों से निकलकर यह हठयोग के रूप में प्राप्य है। मुख्य रूप से हठयोग की दो विद्या मानी जाती हैं। एक हठविद्या अत्यंत प्राचीन मार्कण्डेय प्रोक्त थी और दूसरी हठविद्या जो मत्स्येन्द्र आदि नाथों द्वारा उपदिष्ट है। इन हठ विद्याओं में साधना अंगों को लेकर मतभेद है इनमें कहीं अष्टांc अंगों को स्वीकार किया है, कहीं षडंc को स्वीकार किया है। किन्तु फिर भी हठयोग में षडंc को ही प्रधानता दी गई है और इसको व्यापकता गोरखनाथ आदि हठयोगियों ने ही प्रदान की।[5]

हठयोग की साधना स्थूल शरीर की साधना से प्रत्जसाधना है। हठयोग का वास्तविक ध्येय प्राण जप, प्राण का सुषुम्णा में प्रवेश, कुण्डलिनी की जागृति, बिन्दु–संरक्षण, ऊर्ध्वरेतस् इन्द्रिय विजय, मनः स्थिरता, मनोविजय, मनोनाश, सूक्ष्म दिव्य दृष्टि अन्य अलौकिक शक्तियाँ, अखण्ड वाड़मन सागोचर आनन्दोपलब्धि व्यष्टि आत्मा का समष्टि आत्मा से संयोग, आत्मदर्शन है। आसन व षट्कर्म का लक्ष्य शरीर को उच्चस्तरिय साधना के लिए शुद्ध व दृढ़ करना है। प्राणायाम आदि हठयोग क्रियाओं का लक्ष्य तो नाड़ी शुद्धि कर कुंडलिनी को जाग्रत करना तथा अन्य चक्रों में प्राण की अनुभूतियाँ करवाना है।

हठयोग परम्परा में प्राण–अपान, रज एवं वीर्य, सूर्य एवं चन्द्र तथा जीवात्मा एवं परमात्मा के संयोग को योग कहा गया है।[6] हठयोग में शोधन कर्म या षट्कर्म को पहला स्थान दिया जाना चाहिए[7] किन्तु अष्टांc योग में यम नियम को स्वीकृत किया है।[8] हठयोग की मुख्य साधना आसनों से ही प्रारम्भ होती है। हठ ग्रन्थों में चौरासी लाख जीवयोनियों के अनुसार ही चौरासी लाख आसन माने गए हैं। इसमें से शिव संहिता में चार आसन महत्वपूर्ण माने गए है।[9] इनके अतिरिक्त बन्ध मुद्राओं का वर्णन भी हठयोग में मिलता है। इसके उपरान्त राजयोग के अनुसार प्राणायाम[10] और हठयोग साधना के अनुसार कुंभको का वर्णन मिलता है।[11]

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

हमारे शरीर में दस वायु है इसमें प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान, नाग, कूर्म, कूकर, देवदत्त व धनGजय [12]

इसके अलावा योग की चार अवस्थाओं का वर्णन हठयोग में मिलता है। इसके अतिरिक्त अष्टांc योग के प्रत्याहार, धारणा, ध्यान व समाधि का सुन्दर वर्णन मिलता है। हठयोग में धारणा से ही षट्चक्र भेद या कुण्डलिनी योग का संबंध है। घेरण्ड संहिता में पंच धारणा मुद्राएँ कही गई हैं।[13]

धारणा के उपरांत हठयोग में ध्यान का स्थान है। घेरण्ड संहिता में तीन प्रकार के ध्यान का विवेचन मिलता है।[14] हठयोग समाधि का सुंदर विवेचन मिलता है। हठ, मोक्ष और लययोग की समाधि सविकल्प समाधि है। हठयोग की साधना का मुख्य लक्ष्य शक्ति रूपी कुण्डलिनी को जागृत कर षट्चक्र भेदन द्वारा सह8ार चक्र में शिव के साथ संयोग कर कैवल्य प्राप्ति है जो योग का परम लक्ष्य माना है। हठयोग परंपरा के आदि प्रर्वतक भगवान शिव को ही माना जाता है। नाथ संप्रदाय के आदि प्रवर्तक श्री गोरक्षनाथ ने भी आदि नाथ को ही अपना आदि देव माना है।[15]

श्री आदिनाथाय नमोऽस्तु तस्मै योनोपदिष्टा हठयोगविधा।
विभ्राजते प्रोन्नतराजयोगमारोठुमिच्छोरधिरोहिणीव।।

सर्वशक्तिमान आदिनाथ को नमस्कार के साथ हठयोग विधा की शुरूआत होती है। राजयोग के उच्चतम शिखर तक जाने वाला प्रत्येक अभ्यासी इसका सीढ़ी समान प्रयोग करें।[16] आदिनाथ भगवान शिव के शिष्य मत्स्येन्द्रनाथ, गोरक्षनाथ, जालन्धरनाथ, भर्तृहरि आदि हठयोग विधा के यथार्थ ज्ञानी थे। हठप्रदीपिका के ग्रंथ लेखक स्वात्माराम जी भी इन्हीं योगियों से यह ज्ञान जान जाए। इनके अतिरिक्त इस विधा के ज्ञान से मृत्यु पर विजय प्राप्त कर इस ब्रह्माण्ड में विचरण करते है। इस तरह यह विधा परंपरागत अमर रही है।[17]

श्रीआदिनाथ, मत्स्येन्द्र, शाबर, आनंदभैरव चौरड़्गी, मीन, गोरक्ष विरूपाक्ष, बिलेशय, मन्थानभैरव, सिद्धि, बुद्ध, कन्थाडि, कोरण्टक, सुरानन्द, सिद्धिपाद, चर्पटी, कानेरी, पूज्यपाद, नित्यनाथ, निरGजन, कपाली, बिन्दुनाथ, काकचण्डीश्वर, अल्लाम, प्रभुदेव, घोड़ा चोली, टिण्टिणि, भानुकी, नारद, खण्डकापालिक आदि सभी महान सिद्धों की परंपरा रही है। ये सभी हठयोग की शक्ति से मृत्यु पर विजय प्राप्त कर ब्रह्माण्ड में विचरण करते हैं। इस प्रकार यह हठयोग विधा जो परंपरा से चली आ रही है। सभी प्रकार के दुःखों से दुखी पुरुष के लिए आश्रय स्थल (मठ) के समान है। इसी कारण सभी के लिए हठयोग विधा आधारभूत कच्छप (कछुआ) है। [18]

समुद्र मंथन के दौरान मेरूपर्वत को मथनी बनाया था, उसका आधार कच्छप था।

प्रो0 रामहर्ष सिंह को ऐतिहासिक दृष्टि से हठयोग परंपरा निम्नवत् प्रतीत होती है।

आगम (वैदिकधारा) वेद की समानान्तर धारा

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

तन्त्र (वेदोत्तरधारा) उत्तर महाभारतकालीन

महायान वज्रयान – सहजयान (बौद्ध+तान्त्रिक प्रभाव)

↓

सिद्ध–पन्थ

↓

नाथ–पन्थ सिद्ध–पन्थ का ही परिमार्जित रूप

↓

हठयोग नाथ–पन्थ का अतिरिक्त परिमार्जन

↓

सन्तपरंपरा हठयोगोत्तर धारा।[19]

इस प्रकार भारत वर्ष एक अध्यात्म प्रधान देश रहा है। आरंभ से ही यहां आध्यात्मिक संप्रदाय पुष्पित पल्लवित होते रहे हैं। विशेषतः योग में पुनः पुनः नवीन परम्पराएँ सम्मिलित होती गई। इनमें कदाचित् परिवर्तन भी होते गए तथा मूल परम्पराएँ वर्तमान तक अग्रसर होती रही है।

संदर्भ

1. हंकार कीर्तितः सूर्यष्ठकारचन्द्र उच्यते। सूर्याचन्द्र मसोर्योगाद हठयोगों निपद्यते।। सिद्ध सिद्धान्त पद्धति 1:69
2. जब स्वर चालै पिगला तेहि मधि सूरज वास। इड़ सो बाये अंग, चन्द्र करत परकाश। ज्ञानस्वरोदय9
3. योऽप्राणरोरैक्यं स्वर जोरे तसोस्तया। सूर्य चन्द्रमर्सो योगो जीवात्मा परमात्मने। एवंतु द्वन्द्वजालस्य संयोगो योग उच्यते। योगशिखोपनिषद्
4. रवि शशी दोऊ एक मिलावै। याहिं ते हठयोग कहावै।। सर्वागयोग प्रदीपिका , तृतीयोपदेश चौपाई, दृष्टवय सिंह रामेश्वर प्रसाद, संत काव्य में योग का स्वरूप (पटना : अनुपम प्रकाशन) पृ0 366
5. द्विधा हठः स्यादेकस्तु गोरक्षादिसुसाधकैः। अन्यो मृकण्ड पुत्राधैः साधितो हठसंज्ञकः।। गोपी नाथ कविराज भारतीय संस्कृति और साध्पना प्रथम खण्ड, (पटना : बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् 2066) पृ0 394–395
6. योऽपानप्राणयोर्योगः स्वरजो रेत सस्तथा। सूर्यो चन्द्रमसोर्योगो जीवात्मपरमात्मनोः।। एवं तु द्वन्द जालस्य संयोगो योग उच्यते।। योगबीज 89–90
7. घेरण्ड संहिता 1/12
8. सिद्धसिद्धान्त पद्धति 2/33 पृष्ट 4
9. शिव संहिता 3/100
10. योग सूत्र 2/49
11. सूर्यभेदनमुज्जायी सीत्कारी शीतली तथा। भस्तिका भ्रामरी मूर्च्छा प्लाविनीत्यष्ट कुम्भकाः।। हठयोग प्रदीपिका 2/44
12. प्राणोऽपानः समानश्चोदानव्यानौ च वायवः। नागः कूर्मोऽथ कूकरो देवदत्तो धनGजयः।। गोरक्ष पद्धति – 33
13. घेरंड संहिता 3/63
14. घेरंड संहिता 6/1
15. हठप्रदीपिका पृ0 25
16. श्री आदि नाथाय नमोऽस्तु तस्मै येनोपदिष्टा हठयोगविद्या। हठप्रदीपिका 1/1
17. हठविधा हि मत्स्येन्द्रगोरक्षाद्या विजानते। स्वात्मारामोऽथवा योगी जानीते तत्प्रसादतः।। हठप्रदीपिका 1–4

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

18. श्रीआदिनाथमत्स्येन्द्र शाबरानंद भैरवाः।

चौरङ्गीमीनगोरक्ष विरूपाक्षबिलेशयाः।
मन्थानो भैरवो योगी सिद्धिर्बुद्धश्च कन्थडिः।
कोरण्टकः सुरानन्दः सिद्धिपादश्च चर्पटिः।।
कानेरी पूज्यपादश्च नित्यनाथो निरञ्जनः।
कपाली बिन्दुनाथश्च काकचण्डीश्वराह्वयः।।
अल्लामः प्रभुदेवश्च घोड़ाचोली च टिण्टिणिः।
भानुकी नारदेवश्च खण्डः कापालिकस्तथा।।
इत्यादयो महासिद्धा हठयोगप्रभावतः।
खण्डयित्वा कालदण्डं ब्रह्माण्डे विचरन्ति ते।।
अशेषतापतप्तानं समश्रयमठो हठः।
अशेषयोगमुक्तानामाधारकमठो हठः।। हठप्रदीपिका 5–10

19. सिंह रामहर्ष , योग एवं यौगिक चिकित्सा , (दिल्ली : चौखम्बा संस्कृति प्रष्ठिान 2011) पृ0 46

Vol. II, Issue XIV – June 2016
Article ID # 1007
Peer–Review Refereed Research Journal

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

BRAND EXTENSION- A STRATEGY FOR BUSINESS EXTENSION

Pooja Verma, Assistant professor, Department of Commerce and Management
Maharaja Agrasen College, Jagadhri, Haryana (India)
E-mail Id: vermapooja_83@rediffmail.com

Abstract: *Over the past two decades, the retail landscape has experienced remarkable owing to macro and micro-environmental forces. One of the important marketing strategies utilized by major retailers to sustain in this economy is brand extension. Right now, brand extension is very important for companies that need to be innovative and ahead of the game in regards to business trends. This is presently an emerging trend that has great potential simply because the focus is on both the business and the consumer. The business side is concerned about establishing itself as a trustworthy brand, while the other side is giving the consumer what they want; providing for a market segment that is being unnoticed. Extending within a brand is an established practice, but what is currently trending is companies expanding into nontraditional areas that the business may not already be known for. Brand extension can be a very challenging strategy as it puts the status and image of the core brand at stake. Hence, it is extremely important that any freshly extended brands must have all the necessary marketing elements and its target market correctly evaluated. The strategies of brand extension have become more relevant on the executive- administrative plane because of the direct impact they have had on the opportunities for creating value.*

Keywords: Brand, Brand Extension

Introduction: Brand extension involves utilizing and applying the established corebrand to new product/s, either similar or completely different product category, to get theequity of the original core brand and also to capture new and undiscovered marketsegments. Consumers' generally accept the newlyextended product as they are likely to associate the newly extended product withthe original core brand and/or the name of the company. However, different researchers

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

contend that there is a possibility that brand extension strategy mayharm the equity of the core brand or the company name. That is, any core brand with negativeassociations in terms of its product performance won't be accepted when they areextended and need to be assessed clearly beforehand.

In short, Brand Extension is the use of an established brand name in new product categories. This new category to which the brand is extended can be related or unrelated to the existing product categories. A renowned/successful brand helps an organization to launch products in new categories more easily.

Brand management has become a big challenge for managers as well as the Organizations now days. The decreasing product life of a brand due to intense competition adds further dimensions to the brand management problem. The super market shelf and variants of the same brand occupying the shelf space are common change in every visit. This is true in all cases be it with a soft drink brand leader like Coke to a cream, shampoo or toiletry.

Brand managers are always stressed to grow the market share and increase revenue. Under constant pressure and intense competition, they find it easier to bring out brand extensions in order to provide continual change and an increased value perception to the consumers. Additionally, it helps to capture the niche segments in the market that have not been covered by the parent brand. On the part of the management, brand extensions prove to help in maximizing capacity utilization and stretching resources to the utmost.

BRAND EXTENSION STRATEGIES: Horizontal versus Vertical Extension

A perfect brand extension strategy is that where the brand supports the expansion, while a brand extensionstrengthens the brand (Aaker, 1991). On the other hand, this kind of strategy has negative impact and root cause ofdilution of parent brand image too. Developing new brand requires hudge investment than creating brandextension so, due to this reason firms use brand extension strategy to explore new markets. Brand extension research focuses on consumerperceptions of brand extensions. There are two type of extension. First, brand extension within product line (called horizontal extension strategy) andsecond is brand extension out of product line (called vertical extension strategy).

Horizontal Extension Strategy: Horizontal brand extensions involve using the existing brand name to a newproduct to be introduced in the market. This newly extended product can either be

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

in asimilar product class or as a product category which is entirely new to the firm. For example, DettoI antiseptic introduced dettol sanitizer as its newly extended brand.

There are two additional types of horizontal brand extensions: **lineextension and franchise extension**. **Line extension strategy** employs a current parentbrand name to enter a new market segment in the same product class such as Diet Cokeand Diet Pepsi. Diet Coke and Diet Pepsi are specifically targeted towards healthconscious consumers. **Franchise extension strategy** uses a current parent brand name toenter a new market with a different product category that is relatively new to thecompany. For example, Caterpillar, one of the worlds' leading manufacturers' of construction and mining equipment launching its clothing lines is an ideal for thefranchise extension.

Vertical Extension Strategy

A vertical brand extension involves using the existing brand name to the sameproduct category to be introduced in the market, at a different price/quality continuum. For example, Riders by Lee is an extension of the popular Leebrand, which concentrates on apparel or clothing for both men and women. Researchersstate that vertical extensions give the management a chance to leverage the corebrand's equity more quickly. Vertical brand extension strategy has had been a common practice among numerous industries, such as automobiles, apparel, and soft drinks and so on. A number of luxury automobiles like Acura, Lexus and Infiniti are also good examples of such extensions. However, previousresearches have concluded that a vertical brand extension strategy might create a negativeimpact on the core brand and its evaluation if the extended product was not perceived appropriately by consumers (Dacin & Smith, 1994; John, 1993; Ries & Trout, 1986).Since vertical brand extension generally involves an extension of a product within thesame product category, consumers' brand associations of the original and the extendedbrands are almost similar. Thus, any negative associations related to the extended brandcan immediately result in a negative evaluation of the core brand.

WHY DOES BRAND HAVE EXTENSION?

As the business environment is ever changing, the profile of the organizations also acts accordingly. Introduction and use of technology and globalization has changed everything about business. The concept of marketing is also changed. Online marketing has changed the pace of conventional marketing and both are incomparable by any standards.

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

The work profile and pattern of managers, over the past few years, has shown several changes. Today's brand managers are not confining to planning, product promotion and marketing services, but work as responsible business managers for the brand. They are in fact responsible for the sales, growth as well as the profits of the brand. A strong brand may have a team of brand managers working on the brand across several geographic locations and countries. With the global brands being present in various markets, there arises the need for local factors and sensibilities to be built into the brand and into the brand management as well. Therefore, it makes it imperative to build a brand management team or structure that can work through micro and macro levels.

Take a glance at the shelf in the super market once you visit next time and you will be surprised to see that each of the leading brands be it in the medical section, soft drink or grocery item, there are likely to be multiple variations of the same brand with little difference. Of course we are talking about the brand extensions that have become the latest strategy adopted by brand managers to exploit the brand value. The very recent extension in limelight is by Bisleri. It enters into cold drink market (SPYCI, PINA COLADA, LIMONATA, FONZO). Brand extensions have become the norm of the day. The question that one needs to ask is whether such brand extensions are really required and worthwhile?

Brand extension is also considered to be the most common progression for brands. When organizations spent too muchmoney into manufacturing and technology for launching the parent brand, they would not like to leave out any opportunity to capitalize on the capacity that they have created and maximize returns on investment.

The next logical question that one asks is whether such brand extensions are fruitful and beneficial for the company. What is the possible effect of brand extensions on the parent brand?It is difficult to estimate what the exact result would be for, the results in the case of such brand extension has been mixed in the market.

There is surely a case for brand extensions in the market for various reasons. There is nothing wrong in a firm exploiting the brand image or brand equity when they have strived to build the parent brand over a period of time. Financially too it makes sense for the company to resort to brand extension which is cost effective introducing and promoting a new brand. If successful,

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

brand extension can help in strengthen the parent brand as well as capture the niche market segments no doubt.

However, the thinking behind the brand extension and the strategy is what makes the brand extension a failure or a success. A planned brand extension auger short term revenue, it may not withstand the test of times. The danger of brand extension is something that should be accounted for before jumping into brand extensions. On the other hand, the failure of a brand extension can affect the perception of the consumers with regard to the parent brand and damage the brand value. In Some cases, the brand extension products may not generate new revenue but eat into the parent brand's market share itself.

What works for brand extension is difficult to say. Depending upon the product, one can perhaps map the market and arrive at a good judgment. Categories like biscuits, soft drinks, chewing gum, sauces and jams etc. generally do well with brand extensions. The same does not hold good in terms of all products.

According to branding experts, though there are no guaranteed formulae for success in brand extensions, when the same is carried out as a part of a well identified and planned strategy, it can be successful.

ADVANTAGES OR BENEFITS OF BRAND EXTENSIONS

Brand extension strategy delivers the following benefits.

1. **Capitalize existing brand assets**: A company through brand extension can achieve growth by capitalizing its existing brand assets, when market entry barriers are high.

2. C**ost advantage to retail operation**: Brand extension give financial benefit to the company as company can use its existing capacity and other resources. For example, traditional men's wear brands have incorporated women's wear into their ranges.

3. P**romotional and advertising economies**: In the era of communication revolution, consumers are well aware of various brands available in the market. There is no need to build public awareness afresh. Brand extension involves introducing product variations of the existing brands offered in the market. So, organizations adopting brand extension strategies enjoy economies in promotion and advertising.

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

4. **Provides an instant position and reputation**: Existing brand name gives own products or new businesses an instant position and reputation. Consumers'confidence in existing brands instantly transferred to the new offer.

5. **Extends perceived quality to the new offer**: A product is a bundle of utilities. Consumers are ready to buy a product only when they get maximum utility in terms of price and benefits. The quality of the existing retail offer must match thequality perceived by the consumer.

6. **Reassures a prospective purchaser that the retail offer is well supported**: The initial purchases is being encouraged only when consumer is able to recognize brand. AndConsumers recognize a brand name only when it is favorably perceived by them.

7. I**ncreases the probability of success**: The level and intensity of competition is growing at high pace. Drastic changes in marketing environment calls for desire to grow new product. But huge investments are required to develop and launch a new brand. By extending a brand the marketer can bring the costs down substantially while increasing the probability of success at the same time.

8. **Customer can easily understand the performance delivery of a new brand**: Brand extensions offer a less risky route to a new product category. When a customer is familiar with a brand, the customer knows what to expect from the brand. This is based on what the customer already knows about the brand.When Kelvinator launched a new product, a microwave oven, customer would have been more comfortable in the context of expectations. Familiarity with a brand name reduces the risk perceivedby the prospect in a buying situation.

9. **Help parent brand to grow**:

Brand extensions are justified as they help parent brand in many ways

- The main benefit is that brand extensions bring clarity in brand meaning. It can in fact enlarge the product meaning. For example, J & J is not about baby soap, it is all about baby care. Likewise, IBM is not merely in the computer business but in the customer solution business.
- Furthermore, extensions strengthen the brand's bond with customers. It reinforces the brand image by adding this association.

10. **Superior returns**: Many brands were initially a mono-product. Over time, the mono-activity evolved into a diversified structure. Reliance, for example was about textile business. But now it

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

has grown as a highly heterogeneous business. These include petroleum, supermarkets, mobiles, DTH, etc. It has been proved that focused brands earn less while diversified brands generate huge returns.

DISADVANTAGES OF BRAND EXTENSION

1. **Discourage innovation:** Brand extension strategy may discourage innovation. It may lead to companies producing too many "LOOKALIKE" products.

2. **Harmful for the core brand:** It may dilute the value of the core brand. Extension into too many brands may prove harmful for the core brand.

3. **Cannibalization:** The problem of cannibalization may arise. Look Alike extension may be result into wastage of company's resources. They may gain their sales at the expense of the original.

4. **Lack of financial support:** The main focus is always on the core brand as the company's' generallyrely on the power of the core brand name. As a result, it may not give sufficient attention and financial support to the extension.

5. **Spillover effects:** The negative image and publicity for the original product adversely affects extension with the same brand name.

6. **Negative impacts of inappropriate extension:** An appropriate extension always prove to be fruitful but any inappropriate extension is likely to affect adversely to the company's business. For example, Levi's extended into suits. Another example is a cigarette company's extension into health products.

7. **Battle between core brand and extended brand:** Studies show that extensions are not as successful as the original brand. There is always an internal competition between core brand and extended brand. Making balance between the both becomes one more task for the company.

BRAND EXTENSION – SUCCESS OR FAILURE

RISKS OF BRAND EXTENSIONS

Risks associated with brand extensions are two-fold:

1. The ability of the product to travel across products

2. Marketing a new product not neglecting the core business and overestimating the new brand.

For example,

- ITC extended from cigarette manufacturing to biscuits.

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

- Levi Strauss in the 1980s extended its brands from jeans dress materials into other clothing and shoes. As customers did not accept this, it returned to its core business.

Conclusion: As markets become more competitive, companies are forced to create diverse products portfolios.As a reflection of this common corporate strategy, the studies on the relevance of brand extensions as a marketing strategy and their evaluation by the customer have multiplied in the international academic field. Successful brand extensions depend on consumers' perceptions of fit or similarity between the new extension and the parent brand (Aaker and Keller, 1990; Czellar, 2003; Klink and Smith, 2001; Volckner and Sattler, 2006). Furthermore, studies reveal an interaction between the parent brand and the extension category: factors affecting the parent brand will affect the extension as well. Similarly, factors that influence the extension category will affect the parent brand (ByungChul, Jongwon and Robert, 2007; Hem, 2001; Kumar, 2005; Martinez and Pina, 2003; Martinez, Polo and de Chernatony, 2008; Maureen, 1999; Nan, 2006; Yeung and WyerJr, 2005). Customers evaluating brand extensions may change their core beliefs about parent brands, which may lead to a stronger or weaker brand positioning (Sheinin, 2000).

However, the question that bothers every brand manager is whether such brand extension is good for the parent brand or whether it is a mistake that one is committing in the long run. There is no straight answer to this question. In some cases, brands like GE, Proctor & Gamble, Spencer's etc have been hugely successful in making foray into new businesses using the parent brand and stretching the brand. Brand extensions too have worked well for brands like Nivea, Dove and Loreal etc. In many cases, the brand extensions and stretching exercises have failed too.

Highlighting the success in brand extension few names are pioneering - **Nestle** that has products like Nestle milk powder , condensed sweetened milk (milkmaid) , yogurt , Nestea (iced tea) , coffee , ketchups , noodles , pasta and chocolates like munch , kitkat , POLO , milkybar and alpino under its umbrella**, Godrej** is effectively and cautiously stretching its family brand name, from refrigerators to a highlycrowed market of washing machine and office automation machines,**Videocon** started with TV's, extended to Air-Cooler, Washing machines, and stretched to Air–conditioners and Audio-system,**Johnson & Johnson** systematic extension of its baby care products from baby power to soap, oil,**TATA** spread its arms in automobiles, agribusiness, salt, beverages, fashion & jewelry, telecom, consultancy, hospitality, airlines, along with its core

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

product i.e. steel. **Apsara** drawing pencils to wax crayons and to Erasers, **Dettol** bath soap to antiseptic cream, pain relief spray, adhesive bandage, liquid hand wash, shaving cream, sanitizer. And there are many more extensions that speakes about the success of this strategy. But in this competitive world many compaies also set the example of failure of brand extension strategy such as **Pond's India Ltd**. face cream, face wash and failed in toothpaste, **Coke's** launch of Black Cherry Vanilla Coke and Diet Black Cherry Vanilla Coke failure miserable, **Pepsi's** Cafechino looks like a disaster in India as very people have actually gone for it, Ready-to-eat pizza from **Amul**, India, **Dulux paints** with a unique selling proposition of 7-day fragrance and many more. So, a businessman has to think analytically before going for this strategy.

Bibliography:

1. Aaker, David A. and Kevin L. Keller (1990).Consumer Evaluations of Brand Extensions, Journal of Marketing, 54, January, 27-41.
2. Bhat, S and Reddy, S. K. (2001) 'The impact of parent brand attribute associations and effect on brand extension evaluation', Journal of Business Research, Vol. 53, No. 3, pp. 111-122.
3. Boush, David M. and Barbara Loken (1991). A Process-Tracing Study of Brand Extension Evaluation, Journal of Marketing Research, 28, February, 16-28.
4. Cohen, Joel B. and Kunal, Basu (1987). Alternative Models of Categorization: Toward a Contingent Processing Framework, Journal of Consumer Research, 13, March, 455-472.
5. Grime, I. Diamantopoulos, A. and Smith, G. (2002) 'Consumer evaluations of extensions and their effects on the core brand: Key issues and research propositions', European Journal of Marketing, Vol. 36, No. 11/12, pp. 1415- 1447. 2.
6. Gurhan-Canli Z. and Maheswaran, D. (1998) 'The effects of extensions on brand name dilution and enhancement', Journal of Marketing Research, Vol. 35, No. 4, pp. 464-473.
7. Keller, K. L. (2003) 'Strategic brand management: Building, Measuring and Managing Brand Equity', Prentice Hall, New Jersey.
8. Hem, L. and Iversen, N. M. (2002) 'Decomposed similarity measures in brand extensions', Advances in Consumer Research, Vol. 29, No. 1, pp. 199-206.
9. Martinez, E. and Chernatony, L. D. (2004) 'The effect of brand extension strategies on brand image.Journal of Consumer Marketing, Vol. 21, No. 1, pp. 39-50.
10. Supphellen, M. (2000) 'Understanding core brand equity: Guidelines for indepth elicitation of brand associations', International Journal of Market Research, Vol. 42, No. 3, pp. 319-338.
11. Steenkamp, J.-B.E.M., (1990) 'Conceptual model of the quality perception process', Journal of Business Research, Vol. 21, No. 4, pp. 309–333.

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

12. Morrin, M. (1999) 'The impact of brand extensions on parent brand memory structures and retrieval processes', Journal of Marketing Research, Vol. 36, No. 4, pp. 517-525.
13. Klink, R. R. and Smith, D. C. (2001) 'Threats to external validity of brand extension research.Journal of Marketing Research, Vol. 38, No. 3, pp. 326- 335.
14. Sheinin, D. A. (2000) 'The effects of experience with brand extensions on parent brand knowledge', Journal of Business Research, Vol. 49, No. 1, pp. 47–55.
15. Farquhar, P. H. (1989) 'Managing brand equity', Journal of Marketing Research, Vol. 26, No. 1, 24-33.
16. Yoo, B; Donthu, N; Lee, S (2000) "An examination of selected marketing mix elements and brand equity", Journal of the Academy of Marketing Science, Vol. 28 No. 3, pp. 2-22.
17. http://eprints.qut.edu.au/
18. http://www.marlboroclassics.com
19. http://www.saabnet.com
20. http://www.modaonline.it/publications/articlemodatab.asp?cart=28963
21. http://www.pambianconews.com/ita/default.asp
22. http://www.allaguida.it/articolo/fiat-by-rites-ti-veste-alla-moda/2140/
23. http://www.ijritcc.org/download/browse/Volume_4_Issues/May_16_Volume_4_Issue_5/1466577093_22-06-2016.pdf
24. http://www.emeraldinsight.com/doi/abs/10.1108/JIBR-07-2012-0057

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

Vol. II, Issue XIV – June 2016
Article ID # 1008
Peer–Review Refereed Research Journal

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

EXPLORING DYNAMICS OF USER-GENERATED VOTING-RELATED CONTENT ON FACEBOOK

Ms. Bharti Batra[1], Prof. Manoj Dayal[2]

[1]**Research Scholar**, Department of Communication Management & Technology,
GJUS&T, Hisar, Email: bbatra06@gmail.com

[2]**Professor**, Department of Communication Management & Technology,
GJUS&T, Hisar, Email: manojdayal5@gmail.com

Abstract*: Social media has enabled every individual to be content producer and disseminator. It facilitates users the ability to express themselves, mould opinion and collaborate with others. 16th Indian Lok Sabha Elections realized and harvested dividend of the use of social media in electoral process. The candidates and electors actively involved in political discussions through social media sites as cited by different research studies. The present study aimed to find out dynamics of user-generated voting related content on social media giant Facebook. The data was collected through questionnaire. 100 students of Kurukshetra University were surveyed. The results show that majority of the respondents were first time voters. Most of the respondents reported that they vote to perform duty of a citizen. Their voting decision is based on candidate/party's present status in the state and on the basis of information provided by mass media. One third of the respondents reported that they generated voting related content on Facebook and almost 70% reported that they received such contents on Facebook. An important finding is that more than half of the respondents agreed that they were influenced by such user-generated voting related content on FB. Majority of the respondents agreed that Voting related content on FB motivated and reminded them to vote.*

Keywords : User-generated content, Social Media, Facebook, Voting.

Introduction: Social media is playing a crucial role in all forms of communication. It has remarkably marked its contribution in the electoral system of India as well as in

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

the whole world. A study throwing light on the importance of social media in elections concluded that the fortunes of contestants' seeking elections to the next Lok Sabha will be determined by Facebook users making them the newest vote bank with the power to shape Indian politics.[1] Facebook now a days has become most powerful tool of social media by connecting more than one billion users all over the world. In context of India presently more than 66 million people are actively using social media and this number is continuously growing faster due to availability of cheaper broadband connection and Internet enabled handsets at very low prices.[2]

In today's time, web 2.0 applications are key mediums of communication among youth. The social media giant Facebook is growing while Whatsapp and Facebook messenger are replacing conventional chat and SMS. According to a survey by TCS, Facebook is the most preferred social networking platform at a national average of 75.73% and smartphones are becoming the most preferred option to access social media networking sites.[3] The present communication model is collaborative. It's a time when the consumer their selves are the creator, consumer as well as the distributors of the content. The power of user-generated content is now being hyper-realized with social media sites that represent convergence of user commentary with videos, photos and music sharing, all presented in a simple, user-friendly format, allowing participation on a mass scale. [4]

Social media and Political participation: In conventional election campaigns mass media acted as intermediate between parties, candidates and citizens. New media communication technologies have changed electoral process through new media usage in election campaigns. Earlier in world context these campaigns have proved their efficacy in creating awareness and garnering support. The 2014 Indian General elections acquired the maximum dividend from new media usage in Election campaigning.

The political pundits believe social media has also influenced the way people vote. Social media connects people and make their opinions and discussions collaborative and additionally it lets the political candidates to know the voters' details and reactions.[5]

Facebook has attracted researchers' interest in different contexts related to it. Facebook was not the first of its kind but the way Mark Zukerburg designed it, made

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

Facebook one only of its kinds. Facebook facilitated users to post user-generated content on their profile in the form of text, picture, video, audio and able to get feedback from their Facebook network and also possible to be further shared. The everyday enhancing features of Facebook are making it most popular among social media users. Besides Facebook features, the user-generated content on Facebook relating to voting creates great influence on users. As user-generated content is trusted more than the organization or experts generated content because it creates a feeling as being expression of one among them i.e. the social network of likeminded ones.

Facebook had played important role in various elections. Facebook introduced a feature "I Voted" button in 2008 for Americans. It has experimented with the voting button in several elections since its addition to Facebook features. The company's researchers have presented evidence that the button actually influences voter behavior.[6] Various researchers have researched the role and impact of Facebook content in election time, whether being the case of Barak Obama winning in presidential election, African countries' elections and The Arab spring etc. The present study aims to explore the dynamics of user-generated voting related content on Facebook in context to Indian assembly elections in Haryana.

Literature Review

According to the PEW survey report in 2011, FB users are much more politically engaged than most people. Compared with other internet users, and users of other SNS platforms, a Facebook user who uses the site multiple times per day was an additional two and half times more likely to attend a political rally or meeting, 57% more likely to persuade someone on their vote, and an additional 43% more likely to have said they would vote.

Deepankar Basu & Kartik Mishra in their research article "BJP's Demographic Dividend in 2014 General Elections: An Empirical Analysis" focused on role of first time voters in BJP's mass victory in 2014 general election. The results show that there is a strong positive correlation between the proportion of first time electors and change in BJP's vote share from 2009 to 2014. BJP secured dividend from the group of first time voters through its targeted campaigning, and engaging youth on social media. Dr. Narasimhamurthy in his research paper titled Use, Adoption and Rise of Web Media as tools of communication for Election campaign in India (June 2014)

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

emphasized to find out the use of web media for sharing information and active participation of citizens in electoral process. The findings show that in 16th parliament elections, political parties and candidates heavily relied on web media such as social media to engage voters.

Andrila Biswas et. al. in 2014 in their research article "Influence of Social Media on Voting behavior" studied the impact of the social media on political campaign in India with a special emphasis on Indian youths' voting behavior. The findings reveal that youth follow political candidate on twitter and Facebook and also actively engage in political discussion by expressing their views and opinions in social networks. The results affirm that people favour that party more which is more interactive on social media. The social media push people for voting along with spreading awareness but news media and print media help are crucial for effective outputs.

Research Problem

Literature review about social media in politics reveals many important findings and different research aspects of social media usage in political campaigning and political participation by social media users. Though only a few researches examined in detail the user generated content and its impact on users. Seeing the increasing importance and trustworthiness of user-generated content in today's social media environment the researchers aimed to find out the dynamics of user generated voting related content on the leading social media community on the web, Facebook.

Objectives

1. To know the voting perceptions among youth.
2. To explore the dynamics of user-generated voting related content on Facebook.
3. To find out the youths perspective about user-generated voting related content on Facebook in voting decision.
4. To know the motivational factors behind sharing voting related content on Facebook.

Methodology: In the present research, sample survey method has been employed. Through purposive random sampling technique the data has been collected from 100 respondents using printed questionnaire. Kurukshetra university students are selected for the present research. Data has been analyzed through frequency distribution and simple percentage. Results are presented through tables and graphs.

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

Reference time period

The assembly elections were conducted in Haryana on 15th October, 2014. The data has been collected from 16 October to 31st October 2014.

Data analysis and results:

Table 1: Demographic Details

Variable	Description	Frequency	Percentage
Pursuing	Graduation	17	17%
	Masters	68	68%
	Ph.D.	8	8%
	Others	7	7%
		Total=100	Total=100%
Stream	Arts	34	34%
	Commerce	3	3%
	Science	54	54%
	Others	9	9%
		Total=100	Total=100%
Gender	Male	55	55%
	Female	45	45%
		Total=100	Total=100%
Age (In Years)	16-20 Yrs.	14	14%
	20-25 Yrs.	63	63%
	25-30 Yrs.	21	21%
	Above 30	2	2%
		Total=100	Total=100%
Belongs to	Urban Area	60	60%
	Rural Area	37	37%
	Sub-Urban Area	3	3%
		Total=100	Total=100%

The survey comprised participation of 68% masters students, 17% graduation students, 8% Ph. D scholars and a 7% from others like diploma courses etc. Majority of the respondents were from science i.e. 54%. As the respondents were selected randomly their gender classification resulted 55% Male & 45% Female students. 63% of the respondents were in the age group of 20-25 Years. 60% of the respondents belong to Urban Area.

Voting status and views

Table 2: "Have Voted"

	Frequency	Percentage
First Time	45	45%
Second Time	37	37%
Third Time	17	17%
More than Three Times	1	1%
Total	100	100%

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

The survey results show that majority of the respondents i.e., 45% of the surveyed youth are First time voters. 37% of the respondents have voted twice. 17% respondents reported they have voted for the third time. Only 1% respondent i.e., 1% has voted more than three times.

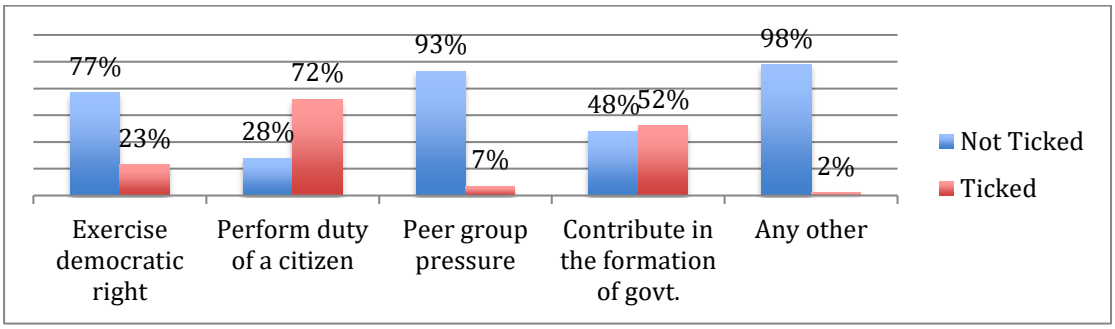

Fig 1. Reasons to vote (Multiple choice question)

Fig. 1. Shows youths reasons to vote as per their perceptions. The data shows that majority i.e. 72% of the respondents opine that they vote "to perform duty of a citizen" and 52% said they vote "to contribute in the formation of government".

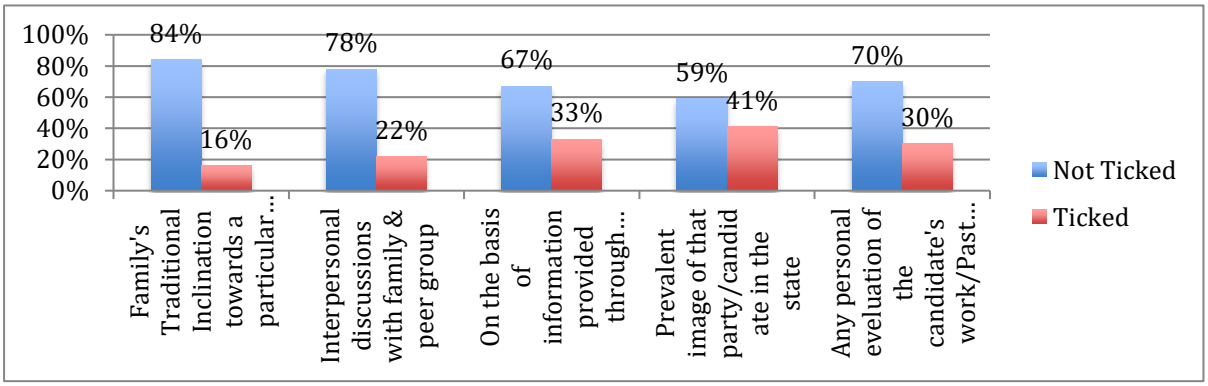

Fig 2. How do you make your voting decision?

In response to the question, **how do you make your voting decision**? Highest (41%) responses were "on the basis of prevalent image of that candidate in the state". The second most selected option was "on the basis of information provided by mass media platforms" as being chosen by 33%. 30% responses were "on the basis of personal evaluation of the candidates past work/ past profile".

Facebook usage

Table 3: Facebook Usage among surveyed youth

Variable	Categories	Frequency	Percentage
Using Facebook From	Less than 1 year	19	19%
	1-2 Years	12	12%
	2-3 Years	23	23%
	3-4 Years	23	23%
	More than 4 Years	23	23%

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

		Total=100	100%
Frequency of Using FB	Occasionally	18	18%
	Once in a week	16	16%
	Once in a day	12	12%
	Twice in a day	18	18%
	Several times a day	36	36%
		Total=100	300%
Approx. time spent in a day	0-15 minutes	39	39%
	15-30 minutes	23	23%
	30-45 minutes	12	12%
	45-60 minutes	14	14%
	More than one hour	12	12%
		Total=100	700%
Aware About FB "I Voted" Option	Yes	50	50%
	No	50	50%
		Total=100	1500%
-If Yes to above, have used	Yes	32	64%
	No	18	36%
		Total=50	3100%

The table 3 shows that 23% of students are using FB from last 2-3, 3-4, and more than 4 years. More than 35% of the respondents use FB for several times in a day. Around 40% of the respondents use FB for 0-15 Minutes. Almost half of the respondents know about "I voted" option on FB Profile. And out of these 50 respondents, 64% have used it on their FB profiles.

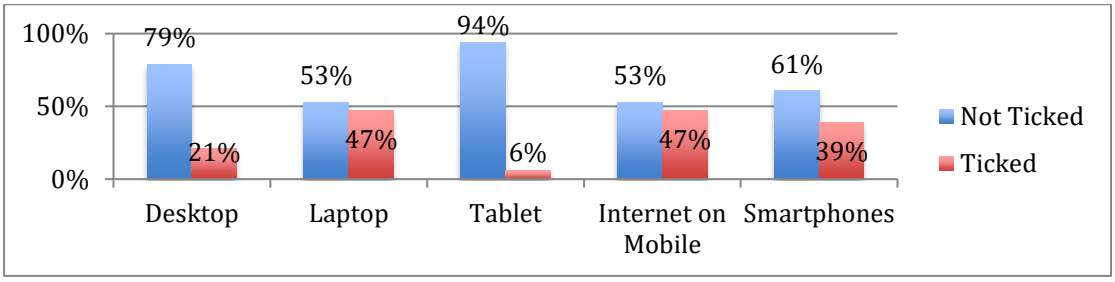

Fig. 3. Accessing Medium to access Facebook (Multiple choice question)

Fig. 3 shows that Laptop and Internet on mobile (47%) were mostly preferred devices to access Facebook followed by FB Access through Smartphones.

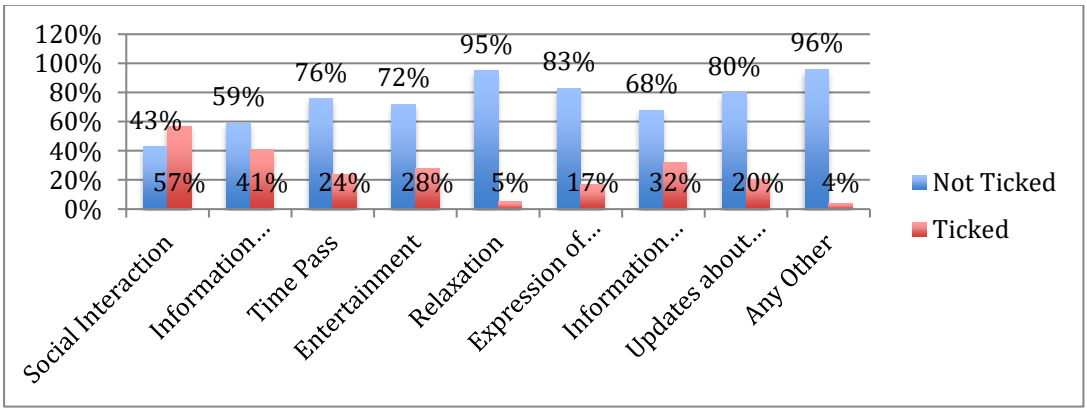

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

Fig. 4. General Purposes of using Facebook (Multi response)

The Fig. 4 shows survey data as per major purposes of FB usage ascertained by earlier studies. From the present survey it was found that majority of the respondents use FB for Social interaction remarked by 57% responses.

Dynamics of user-generated voting related content on FB

The second objective of present study was to explore the dynamics of user-generated voting related content on Facebook. The results are as under:

Generated Voting related content on FB

36% of the respondents answered yes to the question: Did you generate any voting related matter on Facebook during/before assembly elections. The table 4 shows the content type and frequency of generating voting related content.

Table: 4: Content Type of User-generated Voting related content on Facebook

Content type	Frequency				
	Very Much	Much	Normal	Little	Not at all
Opinion [Text post]	28%	19%	36%	14%	3%
Pictures related to voting	17%	36%	31%	6%	10%
Party/Candidate Promotional picture	28%	17%	22%	17%	16%
Any governmental content for vote promotion	19%	11%	28%	33%	9%
News share	33%	17%	33%	11%	6%
Shared links of voting related content on (any other social media site)	14%	17%	25%	31%	13%
Multimedia content (Audio/ Video)	19%	22%	12%	19%	28%
Any other (Please specify)……	11%	22%	3%	8%	56%

The content generation has been considered in terms of content appearance on ones profile through creating, liking, sharing friends post, third party posts or by commenting upon. The percentage of generated content has been counted from the respondent percentage that said yes (36 responedent i.e. 36% of total respondents) to the previous question did you generate any voting related matter on Facebook.

The table 4 shows that highest responses for Opinion post was 36% at normal frequency, Pictures related to voting 36% at frequency much, Party/candidate promotional picture highest frequency was very much 28% responses, governmental content for vote promotion was reported 33% little and 28% normal, News shares were generated highest at frequency 33% very much as well as normal. Surveyed youth who said yes to content generation, reported 31% shared links of voting related content at a little frequency and 25% normal, multimedia content was generated not at

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

all by 28% and 22% said much, in any other category 56% reported not at all generated.

Received Voting related Content on Facebook

In response to the question did you receive any voting related content in your Facebook feed from your friends, 68% respondents said yes. Below are the results for the content type and frequency of received content on FB as being reported by 68% respondents.

Table 5: Frequency of User-generated Voting related content received on FB timeline

CONTENT TYPE	Frequency				
	Very Much	Much	Normal	Little	Not at all
Opinion [Text post]	26%	31%	35%	6%	1%
Pictures related to voting	24%	38%	28%	6%	4%
Party/Candidate Promotional picture	19%	37%	31%	7%	6%
Any governmental content for vote promotion	18%	24%	37%	13%	9%
News share	22%	21%	38%	15%	4%
Shared links of voting related content on (any other social media site)	18%	15%	35%	25%	7%
Multimedia content (Audio/ Video)	16%	15%	22%	28%	19%
Any other (Please specify) …….	3%	3%	7%	21%	57%

The percentage of received content has been counted from the respondents' percentage that said yes (68 respondents i.e. 68% of total respondents) to the previous question did you receive any voting related content on Facebook.

The table 5 data shows that highest responses for Opinion post was 35% at normal frequency, Pictures related to voting 38% at frequency much, Party/candidate promotional picture highest frequency was much 37% responses, governmental content for vote promotion was reported 37% normal, News shares were received highest at frequency 38% normal. Surveyed youth reported 35% received links of voting related content at a normal frequency and 25% normal, multimedia content was received by 28% little and 22% normal, in any other category 57% reported not at all received.

Table 6: Reaction by self & by others (Multiple choice question)

Reaction	By Self	By Others
Ignored	26%	16%
Liked	47%	57%
Further shared	21%	20%
Commented	13%	18%
Any Other	2%	2%

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

In response to the question: How did you and others react to such contents related to voting appearing on Facebook newsfeed. The participants preferred the like option, the most (47%) out of other multiple-choice options. The responses to the other aspect i.e. reaction on such content by others visible in your timeline were: 57% said was liked.

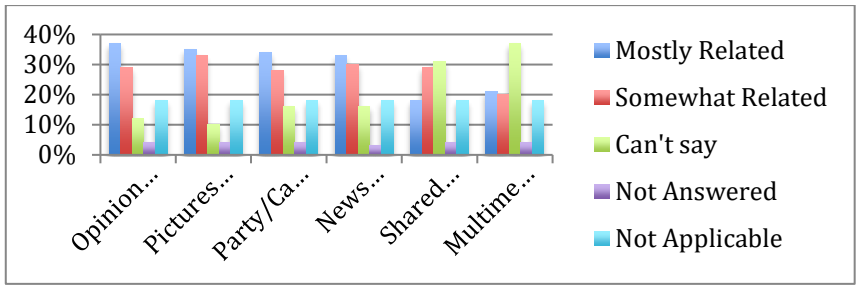

Fig. 5. VRC Content Context according to respondents' perspective

Out of total 100 respondents 18 respondents were marked as not applicable because their previous response to the question did you receive any voting related content on Facebook was no. So those who answered were considered although the no response percentage is 32. But to present question, not applicable respondents are 18%. The logic behind is those who generated content but did not receive cover this gap of 32-18=14 respondents.

On an average 30% of the respondents opine that the contents were mostly related, 28% consider somewhat related, 20% opine can't say, 4% didn't answer and 18% were not applicable to answer as neither generated content nor received VRC on FB. According to the responses opinion post, pictures related to voting, party/candidate promotional picture and news share were mostly related to particular party/candidate.

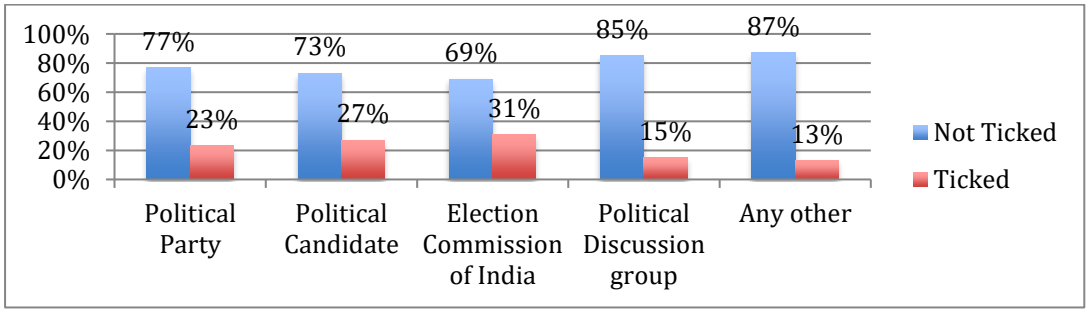

Fig. 6 Are you following/Joined any FB pages. (Multiple choice question)

The figure 6 shows that majority of the respondents follow/have joined Facebook page of Election commission of India (31% responses) followed by next option Political candidate (27% responses).

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

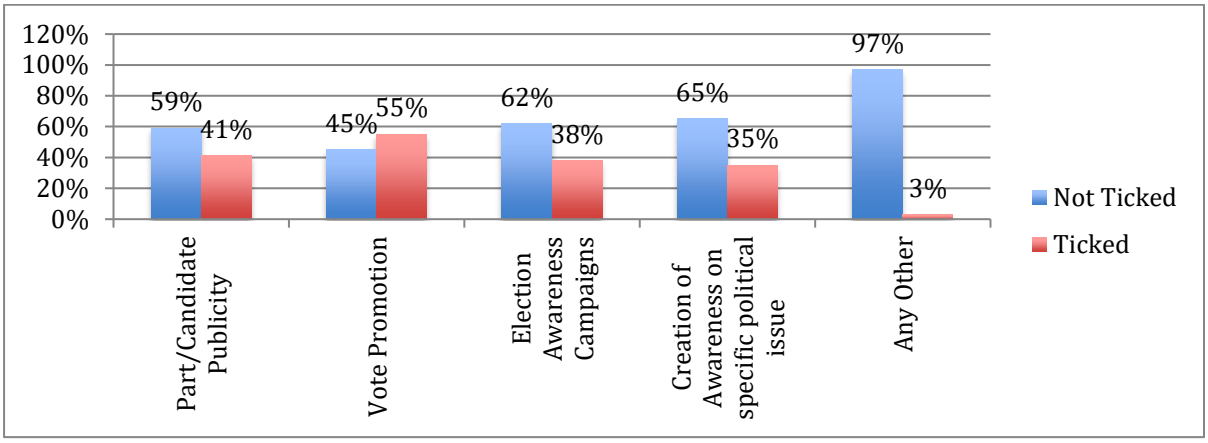

Fig. 7 Voting Related Contents' Purpose

The fig 7 shows responses to the question: What do you think, was the main purpose behind the generation of such user-generated contents on Facebook. More than half of the responses (55%) were for Vote promotion and 41% responses were candidate publicity followed by Election awareness (38%) and 35% reported creation of awareness on specific political issues.

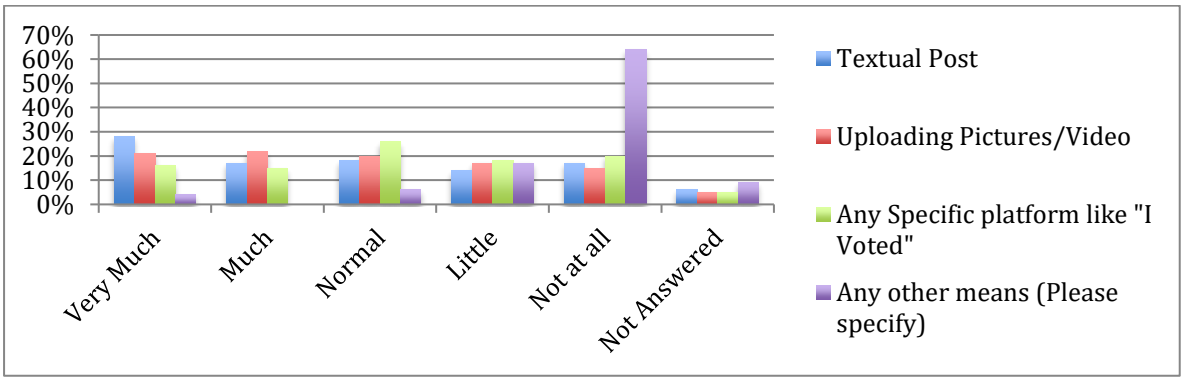

Fig. 8 After voting, did you come across any contents relating to the sharing of voting experience on Facebook?

Fig 8 shows that on an average total 31% got very much and much such experience shares, 34% got normal and little, 29% didn't get any and 6% didn't answer. Textual post appeared very much reported by 28%, Pictures appeared much as being reported by 22%, any other platform share were normal at 26% and through any other medium max. responses were 64% not at all.

Table 7: Did you have any discussion on Facebook regarding to vote and whom to vote?

Discussion	To Vote	Whom to vote
Post/Like/Comment/Share	49%	43%
Chat	22%	19%
Not at all	32%	37%
Not Answered	1%	1%

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

The table 7 reflects that approx. half of the responses was yes in context to Post/like/Comment/Share related to "To Vote" discussion. As the results show that 22% discussed via chat. Although 32% didn't had any discussion to vote on FB in any form. 43% respondents reported they discussed about whom to vote through Post/like/Comment/Share on FB timeline. 19% discussed via inbox chat, although 37% reported not at all to any such discussion.

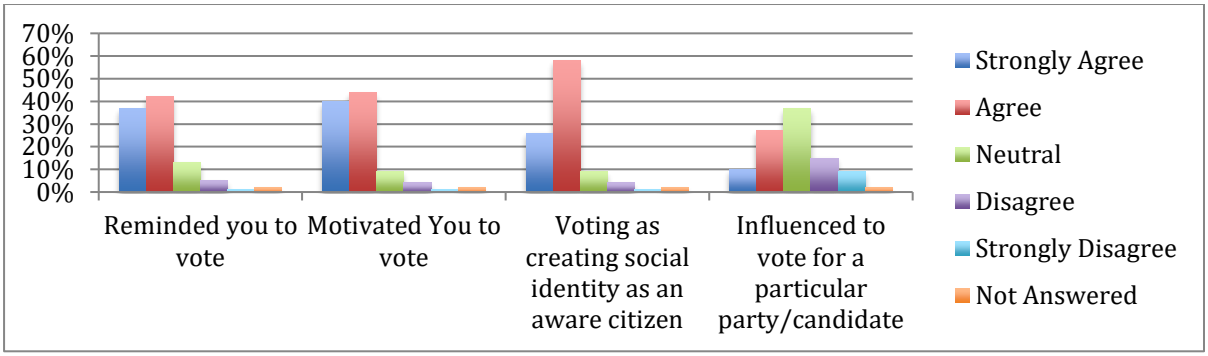

Fig. 9. Users view about user-generated voting related content on FB

The central tendency of the responses represent that 28.25% respondents strongly agree to the statements, More than 42% agree, 17% are neutral, 7% disagree, although just 3% strongly disagree to the above statements. And 2% didn't answer.

Table 8. Were you influenced by voting related contents on Facebook?

Response	Frequency	Percentage
Yes	54	54%
No	46	46%
Total	100	100%

Table 8 shows that 54% respondents reported yes they were influenced by voting related content on Facebook. Further they were asked why were you influenced by such content.

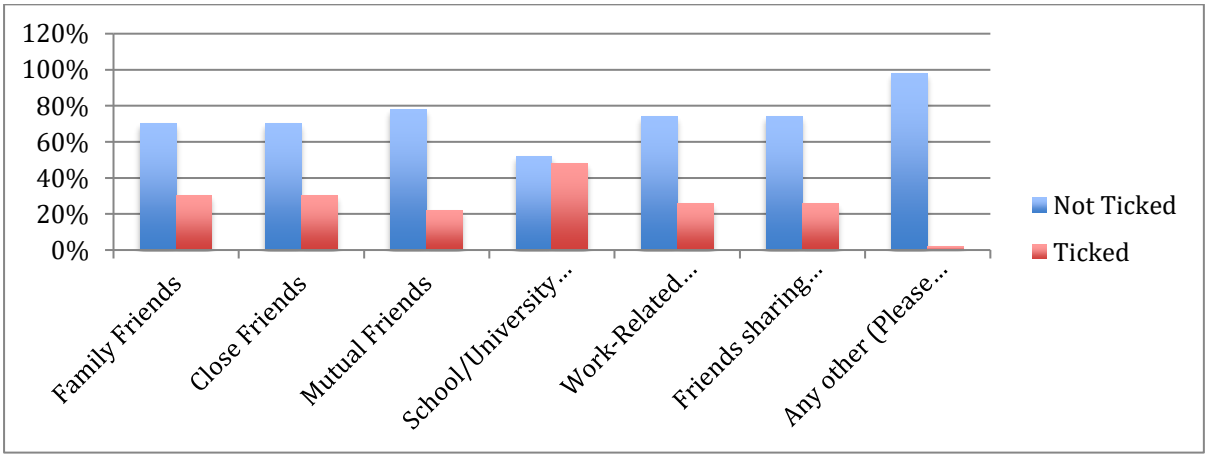

Fig 10. Why, Because it was generated by:

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

The responses percentage has been calculated out of 54 respondents who reported yes they were influenced by user-generated content relating to voting appearing on Facebook. As per fig. 10 majority (48%) of the respondents said they were influenced by user-generated voting related content because it was generated by for "School/University friends". And they believed on those friends because they think they have access to authentic information as reported by almost 50% respondents (Fig 11).

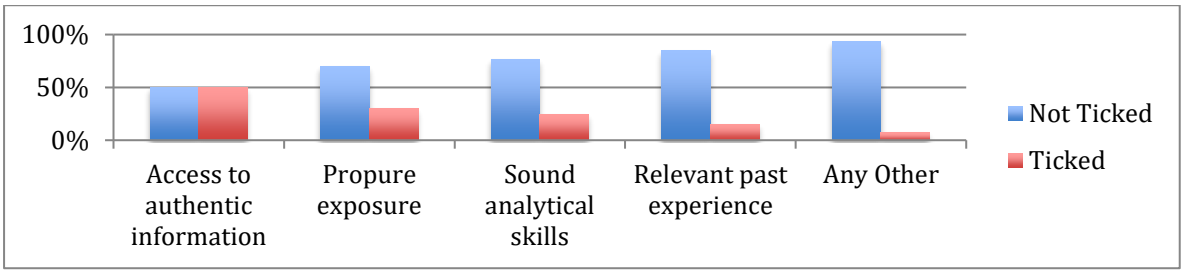

Fig 11. They believed that content and those content generator friends because the users believed that they have?

Conclusion: Facebook has created that platform for everyone where they freely express whatever they feel. They share it with their social network on FB and this content is totally user-generated. Facebook has become a place where the flame's minor agents are left and rest is flamed through joint effort of blowing the flame, which can be both for positive as well as negative purposes. The recent decade has noticed & researched Facebook conversations, its impacts and effects in all fields of life. The present study focused at dynamics of user-generated content on Facebook related to voting. Majority of the surveyed youth comprised first time voters. The present youth are aware citizens. They keep themselves aware and let awareness spread through their communication mediums. The results show that majority of the youth vote as to perform duty of a citizen. Their basics of voting decision are the prevalent image of that candidate/party in the state and information provided through mass media. The findings highlight that out of selected 100's sample one third are VRC generators. Almost 70% are passive receivers of such content. The majority of the respondents generate such contents to spread awareness, to motivate people for voting, & political interest. Mostly such content on Facebook is liked by the users. People are following Election commission, political debate and such community pages on FB to be aware of political activities. More than half of the respondents

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)

ISSN No. 2395-6941
Website: http://www.umrjournal.com/

reported positively influenced of user-generated voting related content because that were generated by their school /university friends. And they trusted such content because they opine the creators have access to authentic information and have relevant past experience. Majority of the respondents strongly agree that such user-generated voting related content influenced them to vote for a particular candidate as well as reminded and motivated them to vote. Future researches can be to know the extent to which user-generated content on social media affects youths' decisions in all spheres of Life.

References:

1. I. R. I. S. (2013). Social Media and Lok Sabha Elections. eSocialSciences. Retrieved from http://www.esocialsciences.org/General/A2013412184534_19.pdf
2. Bala, K. (2014). Social media and changing communication patterns. Global Media Journal: Indian Edition, 5(1), 1-6.
3. Tata Consultancy services (2014). Youth Survey. Retrieved from http://www.tcs.com/SiteCollectionDocuments/2013-2014-GenY-Survey-TCS-0614.pdf
4. Interactive advertising bureau. User Generated Content, Social media, and Advertising. Retrieved from http://www.iab.net/media/file/2008_ugc_platform.pdf
5. Biswas, A., Ingle, N., & Roy, M. (2014). Influence of social media on voting behavior. Journal of Power, 2(2), 127-155.
6. http://gizmodo.com/facebooks-history-of-experiments-that-try-to-make-you-v-1653264193
7. http://pewinternet.org/Reports/2011/Technology-and-social-networks.aspx
8. Basu, D., & Misra, K. (2014). BJP's Demographic Dividend in the 2014 General Elections: An Empirical Analysis. Retrieved from http://www.econster.eu/bitstream/10419/105783/1/2014-6.pdf
9. N., N. (2014). Use adoption and rise of web media as tools of communication for election campaign in India. IOSR Journal of Humanities and Social Science, 19(6).
10. http://www.democracy.uci.edu/files/docs/conferences/2011/Internet.VoterDecisionMaking-Diana%20Owen.pdf
11. Childnet report, Retreived from http://www.digizens.org

© Universal Multidisciplinary Research Journal (Online)